प्रवचन -क्रम

1. प्यास 2
2. मार्ग 16
3. द्वार 30
4. प्रवेश 43

जीवन की खोज
पहला प्रवचन

प्यास

मेरे प्रिय आत्मन्!
मैं आपका स्वागत करता हूं, इससे बड़े आनंद की और कोई बात नहीं हो सकती
कि कुछ लोग परमात्मा में उत्सुक हों। कुछ लोग जीवन के सत्य को और सार्थकता को जानने के लिए प्यासे हों, अगर सच में आपकी कोई प्यास है, कोई आकांक्षा है, जीवन को जानने के लिए कोई हृदय में पीड़ा है तो मैं स्वागत करता हूं। यह भी हो सकता है कि बहुत लोग मात्र सुनने को आए हों, यह भी हो सकता है कि थोड़ा समय हो, और उसे व्यतीत करने को आए हों। तो भी मैं उनका स्वागत करता हूं। इस दृष्टि से स्वागत करता हूं कि कई बार अनायास ही हम जिन सत्यों के लिए तैयार नहीं दिखाई पड़ते हैं, वे भी हमारे हृदय में... मैंने कहा कई बार बिल्कुल अनायास ही कोई सत्य हृदय के किसी तार कोझनझना देता है। और हम जिसके लिए पहले से तैयार भी नहीं थे, उसकी तैयारी का प्रारंभ हो जाता है। इसलिए वे लोग जो प्यासे हैं, और वे लोग जो प्यासे नहीं भी हैं, उनके लिए भी इन चार दिनों में जो बातें होंगी, वे किसी काम की हो सकती हैं। इसलिए मैंने कहा कि मैं आपका स्वागत करता हूं। और आज इस प्राथमिक पहली चर्चा में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुझे मालूम होता है, और जीवन में किसी भी खोज का प्रारंभ जिसके बिना नहीं हो सकता, उसी के बाबत ही बात करूंगा। चार चर्चाओं के लिए मैंने चार ख्याल किए हैं, आज तो आकांक्षा के ऊपर विचार करूंगा। कल मार्ग के ऊ पर बाद में द्वार के ऊ पर और अंत में प्रवेश के ऊपर।
हम साधारणतः मान लेते हैं कि जी रहे हैं, लेकिन बहुत कम लोग हैं जो ठीक-ठीक अर्थों में जीते हैं, बहुत कम लोग हैं जिन्हें इस बात का पता भी चल पाता है कि उनके पास जीवन था। बहुत कम लोग हैं जिन्हें इस बात का बोध हो पाता है कि क्या रहस्यपूर्ण सत्ता उनके भीतर निवास कर रही थी। हम करीब-करीब अपरिचित और अनजान ही अपने से जी लेते हैं। निश्चित ही ऐसा जीवन कोई आनंद कोई शांति न दे पाए तो अस्वाभाविक नहीं होगा। यही स्वाभाविक होगा कि जीवन एक दुख और चिंता, और एक परेशानी और एक पीड़ा बन जाए। वैसा ही हमारा जीवन है। स्वाभाविक है कि जीवन को जानने की उत्सुकता पैदा हो, हम जानना चाहें कि हम क्यों हैं, हमारी सत्ता क्यों है? कौन सा प्रयोजन है, कौन सा अर्थ है, जिसकी वजह से हमें होना पड़ा है? अगर हमें यह भी पता न चल पाए कि कौन सा प्रयोजन है, कौन सा अर्थ है, तो हम जीएंगे तो जरूर लेकिन जीवन एक बोझ होगा। घटनाएं घटेंगी और समय व्यतीत हो जाएगा, जन्म से मृत्यु तक हम यात्रा पूरी कर लेंगे। लेकिन किसी, किसी सार्थकता को, कृतार्थता को और धन्यता को अनुभव नहीं कर पाएंगे। बहुत थोड़े से लोग ही जीवन की सार्थकता को जान पाते हैं। हर एक मनुष्य के लिए जीवन को जानने के लिए सर्वप्रथम आवश्यक होगा कि उसके भीतर कोई प्यास हो।
बुद्ध एक गांव के पास ठहरे हुए थे। और एक व्यक्ति ने सुबह-सुबह आकर उनसे कहा, आप इतने दिनों से, इतने वर्षों से लोगों को समझा रहे हैं, परमात्मा के लिए, मोक्ष के लिए, आत्मा के लिए, कितने लोगों को परमात्मा उपलब्ध हुआ है? बुद्ध ने कहाः आपकोशायद लगता होगा कि शायद वह कुछ गड़बड़ है, करीब-करीब सारे लोग वैसे ही हैं। कुछ लोग बोलते हैं, कुछ लोग चुप रह जाते हैं, इससे कोई बहुत भेद नहीं पड़ता। जो चुप बैठे हैं, वे कोई बहुत बेहतर हालत में नहीं हैं। हमारे मन इतने विक्षिप्त हैं, इतने पागल हैं, हमें पता भी नहीं हम क्या कर रहे हैं, क्या कह रहे हैं, क्या बोल रहे हैं? हम कैसे जी रहे हैं इसका भी हमें कोई पता नहीं है? और इसलिए इस तरह की बातें हो जाती हैं।
बुद्ध ने कहाः मैं लोगों को समझा रहा हूं, मैं लोगों को कह रहा हूं,
कोई चालीस वर्षों से मैंने लोगों को परमात्मा के और जीवन के अर्थ के संबंध में बातें कही हैं। और यह भी तुम्हारा कहना ठीक है कि कितने लोगों को मोक्ष और लोगोंको परमात्मा का अनुभव हुआ? तुम ठीक ही पूछते हो, लेकिन इसके पहले
कि मैं तुम्हें उत्तर दूं, मैं यह जानना चाहूंगा कि तुम गांव में जाओ, छोटा

सा गांव है और सारे लोगों से पूछो, कितने लोग परमात्मा को चाहते हैं? कितने लोगों की आकांक्षा है, कितने लोगों के मन में प्यास है? वह आदमी गया, उसने गांव के सारे लोगों से सुबह से सांझ तक पूछा, थोड़े से लोग थे उस गांव में, उसने सारे लोगों की फेहरिस्त बनाई, कोई धन चाहता था, कोई पद चाहता था, कोई यश चाहता था, किसी की कोई और चाह थी, लेकिन परमात्मा को चाहने वाला कोई न था। वह वापस लौटा। बुद्ध ने कहा कि अगर कोई परमात्मा को न चाहता हो, तो ऊपर से परमात्मा किसी के ऊपर थोपा नहीं जा सकता है। कोई किसी को दे नहीं सकता है, भीतर प्यास होनी चाहिए तो पानी की खोज होती है, और भीतर प्यास हो तो पानी अवश्य मिल जाता है।
तो सबसे पहली जरूरत, जो लोग भी जीवन के संबंध में उत्सुक हों, जो जानना चाहते हों उस रहस्य को, उस अर्थ को जो उनके भीतर है, तो आवश्यक होगा कि वे इस बात को खोज लें कि उनके भीतर कोई प्यास भी है या नहीं। हम में से बहुत लोगों के भीतर कोई प्यास ही नहीं है। हम में से बहुत से लोगों के भीतर कोई आकांक्षा ही नहीं है। हमारे भीतर कोई जलती हुई अतृप्ति नहीं है, कोई असंतोष नहीं है। हम करीब-करीब संतुष्ट लोग हैं। हम जैसे हैं करीब-करीब उससे संतुष्ट हैं। और हमें ख्याल भी पैदा नहीं होता, अतृप्ति भी पैदा नहीं होती, हमारे भीतर कोई तीव्र ज्वाला असंतोष की जलती नहीं। साधारणतः सारे धार्मिक लोग समझाते हैं, संतुष्ट हो जाएं, मैं तो कहता हूं, असंतुष्ट हो जाएं क्योंकि जो आदमी संतुष्ट हो जाएगा, उसके जीवन में कोई खोज, कोई अन्वेषण संभव नहीं होगा। जो आदमी तृप्त हो जाएगा, जैसा जीवन है उससे ही जो सहमत हो जाएगा, जो जहां है उससे ही संतुष्ट हो जाएगा, उसके जीवन में कोई विकास, कोई प्रगति, कोई ऊपर उठना मुश्किल है। असंतोष धार्मिक आदमी का पहला लक्षण है, और सत्य की खोज में असंतोष चाहिए। जीवन जैसा है उससे असंतुष्टि चाहिए। हम भी असंतुष्ट तो होते हैं, लेकिन हम जीवन से असंतुष्ट नहीं होते, हम जीवन की चीजों से असंतुष्ट होते हैं।
एक आदमी जिस पद पर है, उससे असंतुष्ट हो जाता है, दूसरा पद चाहता है।
एक आदमी के पास जितना धन है उससे असंतुष्ट हो जाता है और ज्यादा धन चाहता है। एक आदमी के पास जो चीजें हैं उनसे असंतुष्ट हो जाता है, और दूसरी चीजें चाहता है। लेकिन हम जीवन से असंतुष्ट नहीं होते। जो मुनष्य वस्तुओं से असंतुष्ट हो रहा है, उसकी धर्म में कोई उत्सुकता नहीं है, लेकिन जो मनुष्य जीवन से ही असंतुष्ट हो जाता है उसका धर्म में प्रवेश प्रारंभ हो जाता है। धार्मिक जीवन की शुरुआत जीवन के प्रति असंतोष से होती है। लेकिन हम सारे लोग अपने असंतोष को वस्तुओं पर ही समाप्त कर देते हैं, और जीवन से असंतुष्ट होने के लिए हमारे पास असंतोष की शक्ति भी शेष नहीं रह जाती। हम सारे लोग ही असंतुष्ट हैं। लेकिन उन चीजों से असंतुष्ट हैं जिन चीजों का असंतोष हमें और संसार में गहरे ले जाएगा। लेकिन उस सत्ता के प्रति असंतुष्ट नहीं है जो हमें सत्य की तलाश में ले जा सके। यह सोचना आवश्यक है, यह विचारणीय है कि असंतोष की दिशा बाहर की तरफ न हो और भीतर की तरफ हो जाए। जो व्यक्ति भी भीतर के प्रति असंतुष्ट हो जाएगा, वह अनिवार्यतया सत्य की खोज की आकांक्षा और प्यास को अपने भीतर जागता हुआ अनुभव करेगा। हम जानते हैं जीवन जैसा बाहर है, जीवन का जैसा विस्तार बाहर है उससे हम परिचित हैं। लेकिन हमारे भीतर भी एक जीवन का विस्तार है उससे हमारा कोई परिचय नहीं। और परिचय न होने का कारण यह नहीं है कि हमारा ज्ञान कम है, परिचय होने का कारण यह नहीं है कि हमारी योग्यता कम है, परिचय न होने का कारण यह नहीं है कि हमारी क्षमता कम है, और कुछ थोड़े से लोगों की ही क्षमता है कि वे उसको पा सकें, यह कारण नहीं है। क्षमता प्रत्येक के भीतर है, योग्यता प्रत्येक के भीतर है, लेकिन हमारा असंतोष भीतर की तरफ नहीं है। हम अपने होने से असंतुष्ट नहीं हैं। हम करीब-करीब तृप्त हैं अपने होने से। और यह कितना आश्चर्यजनक मालूम होता है अगर हम खोजें थोड़ा सोचें और यह विचार करें तो क्या हमें यह दिखाई पड़ेगा कि हमारी सत्ता जैसी है, हमारी चेतना की जैसी स्थिति है, वह संतोष होने लायक है? क्या हम संतुष्ट होना पसंद करेंगे? लेकिन हम कभी इस तरफ कोई ध्यान नहीं देते। हमारा कोई ख्याल, हमारा कोई विचार इस तरफ नहीं जाता। और यह स्मरण रखिए, जिस तरफ हमारा ध्यान नहीं

जाता, उस तरफ के द्वार बंद रह जाते हैं। ध्यान जहां जाता है, वहीं के द्वार खुलने शुरू होते हैं, और जहां ध्यान नहीं जाता, वहां के द्वार बंद हो जाते हैं।
आपने स्मरण किया हो, कभी ख्याल किया हो, अभी आप मेरी बातें सुन रहे हैं, और रास्ते पर गाड़ियां निकल रही हैं, उनकी आवाजें हो रही हैं, हो सकता है आप मेरी बातें सुनने में इतने तल्लीन हों कि आपको रास्ते पर निकलती हुई गाड़ियों का कोई पता न चले। लेकिन अगर मैं कहूं कि रास्ते पर गाड़ियां हैं और आवाजें हैं, आपका ध्यान उस तरफ जाएगा, और आपको पता चलेगा कि रास्ते पर आवाजें हो रही हैं, रास्ते पर गाड़ियां चल रही हैं। अभी मैं बोल रहा हूं, आपका ध्यान मेरी तरफ लगा है, आपको पता भी नहीं होगा कि जिस कुर्सी पर आप बैठे हैं वह सख्त है और आपको गड़ रही है। लेकिन जब मैं कहूंगा कि आप कुर्सी पर बैठे हुए हैं, तत्क्षण आपका ध्यान कुर्सी की तरफ जाएगा, आपको अपने चारों तरफ कुर्सी घेरे हुए मालूम पड़ेगी। आपका ध्यान जिस तरफ जाएगा, उस तरफ ही केवल आपको बोध उपलब्ध होते हैं।
एक युवा खेल रहा हो मैदान में उसके पैर में चोट लग गई हो, जब तक खेल पूरा न हो जाए, तब तक उसे पता भी नहीं चलता कि पैर में चोट लगी हुई है। खेल पूरा होने पर उसे ज्ञात होता है कि मेरे पैर में चोट है और खून बह रहा है। इतनी देर तक चोट थी, खून बह रहा था, लेकिन उसे पता नहीं था, क्यों? ध्यान की धारा उस तरफ नहीं थी। ध्यान जिस तरफ जाएगा उस तरफ ही केवल बोध होने शुरू होते हैं।
काशी में एक नरेश थे, उन्नीस सौ बीस में उनका एक ऑपरेशन हुआ। उन्होंने कहा कि मैं ऑपरेशन के वक्त किसी तरह का क्लॉरोफार्म, किसी तरह की बेहोशी की कोई दवा लेना पसंद नहीं करूं गा। कहा गया, फिर कैसे होगा ऑपरेशन? तो उन्होंने कहा कि मैं गीता पढ़ता रहूंगा, जब मैं गीता पढ़ता हूं, मुझे सारी दुनिया भूल जाती है। उस वक्त मेरा ऑपरेशन कर लिया जाए। डाक्टर बहुत दिक्कत में पड़े। खतरा भी हो सकता है, वे गीता पढ़ते हों और बीच में ध्यान टूट जाए। तो डाक्टरों ने छोटा-मोटा ऑपरेशन करके पहले देखा तो पाया अगर उनका हाथ भी काट दिया जाए, तो भी वे गीता पढ़ते वक्त उन्हें उसका बोध नहीं होता। फिर उनका पूरा ऑपरेशन हुआ। उस ऑपरेशन की सारी दुनिया में चर्चा हुई। बड़ा ऑपरेशन था, पेट का ऑपरेशन था, वे गीता पढ़ते रहे और ऑपरेशन हुआ। उमर हुआ, खलीफा उमर हुआ। एक बहुत अदभुत व्यक्ति हुआ। वह युद्ध के मैदान में था, उसको एक तीर मार दिया गया, उसको तीर चुभ गया, तीर इतने गहरे घुसा हुआ था उसे निकालना इतना कठिन काम था, इतनी पीड़ा और दर्द की स्थिति थी कि उसे निकालना मुश्किल था। चिकित्सकों ने कहाः हम क्या करें? लोगों ने कहाः जब उमर सुबह नमाज को बैठ, तब खींच कर उसे निकाल लेना, उसे कोई पता नहीं चलेगा। खलीफा उमर सुबह नमाज पढ़ने बैठा और उसका तीर खींच कर निकाल लिया गया और उसे कोई पता नहीं चला। उसका ध्यान कहीं और था। वस्तुतः जहां हमारा ध्यान होता है, उसी सत्ता का हमें केवल बोध होता है और किसी सत्ता का हमें बोध नहीं होता। हमारा ध्यान भीतर की तरफ नहीं है, हमारा ध्यान बाहर की तरफ है, इसलिए बारह की दुनिया तो हमें ज्ञात होती है। भीतर की दुनिया हमें ज्ञात नहीं होती। हमारा ध्यान शरीर की तरफ है इसलिए शरीर का हमें पता चलता है, और आत्मा का हमें कोई पता नहीं चलता।
कितने लोग हैं जो पूछते हैं, आत्मा है? उनसे केवल इतना ही कहना होगा, आत्मा तो जरूर है, लेकिन उसकी तरफ ध्यान नहीं है। इसको स्मरण रखिए, जिस तरफ आपका ध्यान होता है, उसी सत्ता का केवल बोध होता है, और कोई बोध आपको उपलब्ध नहीं हो सकते। हमारा ध्यान भीतर की तरफ नहीं है, हमारा सारा ध्यान बाहर की तरफ बटा हुआ है, एक चीज हमारे ध्यान से हटती है तो दूसरी आ जाती है, दूसरी हटती है, तो तीसरी आ जाती है, कोई विराम नहीं मिल पाता, जहां कि हम भीतर की तरफ ध्यान को ले जा सकें। और इसलिए बाहर का असंतोष हमारे ध्यान को भीतर नहीं आने देता है। जीवन के प्रति असंतुष्ट होना आवश्यक है, तो ध्यान की धारा भीतर की तरफ आनी शुरू हो जाती है। कैसे यह होगा? क्या रास्ता होगा, उसकी हम इन चार दिनों में चर्चा करेंगे। कैसे ध्यान भीतर चला जाए और हम सत्ता को अनुभव कर सकें, और जो सत्ता है वही सत्य है। और जो स्वयं को जान

लेता है, वह परमात्मा को भी जान लेता है। क्योंकि मूलतः मैं अपने केंद्र में अपनी जड़ों में, अपनी सत्ता के आंतरिक हिस्से में जो कुछ हूं, वही सारा जगत भी है।
सारी बात, सारी चेष्टा, सारी साधना और सारे धर्म, एक ही बात से संबंधित हैं कि ध्यान की धारा वह जो कांशसनेस है, हमारी उसकी जो धारा है, वह बाहर की तरफ न बह कर, भीतर की तरफ कैसे बह जाए? इसका कोई यह अर्थ नहीं है कि हम बाहर की तरफ अंधे हो जाएं, इसका कोई यह अर्थ नहीं है कि हम बाहर की तरफ से ध्यान को इस भांति भीतर खींच लें कि बाहर की दुनिया में हम मुर्दे हो जाएं, इसका यह अर्थ नहीं है। इसका केवल इतना ही अर्थ है कि यदि बाहर के जीवन से हम थोड़े विराम खोज लें, थोड़े से क्षणों को भी विराम खोज लें, अपनी चेतना की धारा को भीतर ले जाने में समर्थ हो जाएं, तो एक अदभुत जीवन स्रोत हमें उपलब्ध होगा और हम उस सत्य को जान सकेंगे, जो हमारे भीतर शरीर को धारण किए है, जो हमारे भीतर अनेक जन्मों को धारण करता है, जो हमारे भीतर यात्रा करता है, जो हमारे भीतर जब हम बच्चे थे तब था, जो हमारे भीतर युवा हुए तब था, जब हम बूढ़े होंगे तब होगा। और अगर हम उसे जान लें तो हमें ज्ञात होगा, जब हमारा जन्म नहीं था, तब भी था, और जब हमारी मृत्यु हो जाएगी, तब भी होगा। उसे जाने बिना जीवन के जीवन की खोज में कोई सार्थकता कभी उपलब्ध न हुई है, और न कभी हो सकती है।
ध्यान भीतर कैसे ले जाया जा सके? इतना आज मैं कहना चाहूंगा कि ध्यान
को भीतर ले जाने की बात तभी पैदा होती है, जब हमें यह ख्याल आ जाए कि हम जैसे हैं, वह संतुष्ट होने योग्य स्थिति नहीं है।
क्राइस्ट के पास निकोडेमस नाम के एक युवक ने रात को जाकर कहा था, मैं परमात्मा को जानना चाहता हूं। क्राइस्ट ने उसे नीचे से ऊ पर तक देखा, और कहा परमात्मा को जानने के पहले तुझे दूसरा जन्म ग्रहण करना होगा। तुझे तो फिर से जन्म लेना होगा। निकोडेमस शायद समझा नहीं कि फिर से जन्म लेने का क्या मतलब होगा? क्या मरने के बाद फिर मैं परमात्मा को जान सकूंगा? क्राइस्ट ने कहाः नहीं, वैसा अर्थ नहीं है, तू जैसा अभी है, ठीक वैसा ही होकर परमात्मा को नहीं जाना जा सकता है। तुझे एक नया आदमी हो जाना पड़ेगा। और नये आदमी हो जाने का यह अर्थ है, नये आदमी होने का केवल एक ही अर्थ है कि मेरे ध्यान की धारा, मेरे बोध का जो प्रवाह है, मेरी चेतना का जो अनुभव है, मेरी स्मृति और मेरा ज्ञान जिस तरफ बह रहा है, उस तरफ न बह कर उसकी तरफ बहने लगे जहां मेरी आत्मा है, जहां मेरी सत्ता है तो मैं एक नया आदमी हो जाऊं। और उसके लिए प्यास जरूरी है। प्यास कोई भी नहीं दे सकता। पानी तो कोई भी दे सकता है, लेकिन प्यास कोई भी नहीं दे सकता। पानी तो कोई भी दे सकता है, लेकिन प्यास कोई भी नहीं दे सकता। और प्यास न हो तो पानी व्यर्थ हो जाता है। आपके सामने सागर भरा हो, लेकिन प्यास न हो तो पानी व्यर्थ है। जमीन पर बुद्ध हुए हैं, महावीर हुए हैं, क्राइस्ट हुए हैं, कृष्ण हुए हैं, राम हुए, मोहम्मद हुए, हजारों लोगों के करीब से वे निकले, लेकिन जिनके पास प्यास थी, वे उनके भीतर के पानी को पहचान सके, और जिनके भीतर प्यास नहीं थी, वे अपरिचित रह गए। पानी हमेशा मौजूद है, लेकिन प्यास सबके भीतर मौजूद नहीं है। और प्यास कोई दूसरा मनुष्य पैदा नहीं कर सकता। प्यास आपको खुद ही पैदा करनी होगी। कैसे प्यास पैदा होगी? अगर नहीं है तो प्यास कैसे पैदा होगी? प्यास पैदा होती है पीड़ा से, पीड़ा के किसी अनुभव से। जीवन में बहुत पीड़ा है और बहुत दुख है, लेकिन उस दुखे को हम भुलाने के उपाय खोजते हैं, उस दुख से हम अपने भीतर पीड़ा को पैदा नहीं होने देते।
आपके पड़ोस में कोई मर जाए, रोज कोई मर रहा है। लेकिन क्या किसी को मरते देख कर आपको तत्क्षण यह प्रश्न खड़ा होता है कि मैं भी मरूंगा? अगर यह प्रश्न खड़ा नहीं होता, आपके भीतर प्यास कभी पैदा नहीं होगी। आप रोज अपने चारों तरफ क्या देख रहे हैं? जो आप देख रहे हैं, अगर आपकी आंखें खुली हों तो आपके भीतर एक अदभुत प्यास का जन्म हो जाएगा। जीवन को जानने की जीवन को पहचानने की, जीवन को जीतने की एक आकांक्षा पैदा हो जाएगी।
एक बहुत अदभुत फकीर हुआ, उससे किसी ने पूछा, उसका नाम था, बायजीद। उससे किसी ने पूछा कि तुम्हारी परमात्मा की तरफ आंखें कैसे उठीं? उसने कहा जब

मैंने जीवन में दुख देखा तो मेरी आंखें परमात्मा की तरफ उठ गईं। लेकिन हम जीवन में दुख देखने में समर्थ नहीं हो पाते। हम सारे लोग दुःख से घिरे हैं, लेकिन दुख हमें दिखाई नहीं पड़ता। और जब दुख हमें दिखाई पड़ता है, हम कई तरकीबों से उसे भुला लेने की कोशिश करते हैं।
एक मेरे मित्र हैं, उनका युवा पुत्र गुजर गया वे मेरे पास आए। और उन्होंने मुझसे पूछा क्या पुनर्जन्म होता है? मैंने पूछाः यह आप क्यों पूछते हैं? वे बोले कि मेरा युवा पुत्र गुजर गया है, मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या पुनर्जन्म होता है? मैंने कहा कि उसकी मृत्यु से जो दुख हुआ है, उसे भुलाने का उपाय खोज रहे हैं। अगर मैं कह दूं कि पुनर्जन्म होता है, आपका पुत्र मरा नहीं, उसकी आत्मा जिंदा है तो आप तृप्त होकर वापस लौट जाएंगे। वह जो पुत्र की मृत्यु से जो आघात आपके ऊपर पहुंचा है, उसे आप झुठला लेने की, भुला देने की कोशिश में लगे हुए हैं। वे एक साधु के पास गए और उन साधु ने उनसे कह दिया, चिंता की कोई भी बात नहीं, मैं जानता हूं, तुम्हारे पुत्र का जन्म तो स्वर्ग में हो गया है। वे बहुत तृप्त वापस लौट आए। मैंने उनसे कहा कि मृत्यु एक मौका थी कि उसमें आप जाग सकते थे और प्यास पैदा हो सकती थी। उस मौके को आपने खो दिया।
हम रोज मौका खो रहे हैं। जीवन में वे ही समस्याएं हैं, अगर हम उन्हें गौर से देखें तो एक जागरण, एक प्यास, एक असंतोष पैदा हो सकता है। और अगर हम उन्हें झुठलाने की कोशिश करें, भुलाने की कोशिश करें, एक्सप्लेनेशंस खोजने की कोशिश करें और जिंदगी के हर मसले पर कुछ विचार करके शांत हो जाएं तो जीवन हमारे भीतर उतने दंश को पैदा नहीं कर पाएगा, जोकि हमें जगा दे और हमारी नींद को तोड़ दे। नींद को तोड़ने के लिए जरूरी है कि जीवन के दुःख का भार बहुत तीव्र हो जाए। आपने देखा होगा कि अगर सपना आप देखते हों, सुखद सपना देखते हों तो सपना टूटना आसान नहीं होता। लेकिन अगर आप दुखद सपना देखते हों, कोई नाइट मेयर देखते हों तो किसी पहाड़ से गिर गए हों, कोई पत्थर आपके ऊपर गिर गया हो, सपना ज्यादा देर नहीं चल पाता, वह टूट जाता है। सपना केवल दुख में टूटता है और जीवन में भी जो सोए हुए हैं, वे भी केवल दुख में ही जागते हैं।
दुख एक वरदान है। अगर उसे कोई देख पाए, अन्यथा दुख एक अभिशाप है, अगर कोई उसे भुलाने की कोशिश करे। और जीवन में दुख बहुत है। चारों तरफ सारा जीवन दुख से भरा हुआ है। लेकिन हम अपने छोटे-छोटे सुखों में दुख को भुलाने का उपाय कर लेते हैं और अपनी आंखें बंद कर लेते हैं, तब प्यास नहीं पैदा हो पाती। फिर जो ईश्वर की और आत्मा की हम बातें करते हैं, वे सब बातें व्यर्थ होती हैं, वे हमारे भीतर कोई गहरी आकांक्षा पैदा नहीं करतीं। वह सब हमारी बातचीत होती है, हमारा संस्कार होता है, हमारी शिक्षा होती है, हमारी संस्कृति होती है, हम उन बातों को सीख गए हैं, उन बातों को दोहराते हैं। लेकिन उन बातों से हमारे भीतर कोई, कोई ऐसी आकांक्षा पैदा नहीं होती कि जीवन में क्रांति हो जाए। क्रांति के लिए जरूरी है, अगर हम इस भवन में बैठे हुए हैं, अगर मुझे ज्ञात हो जाए कि भवन में आग लग गई है, आपको पता चल जाए कि भवन में आग लगी है तो आप बाहर हो जाएंगे। उस वक्त आप किसी से नहीं पूछेंगे कि बाहर जाने का रास्ता कौन सा है? आप यह भी नहीं पूछेंगे कि बाहर कैसे जाऊं? आप यह भी नहीं पूछेंगे, इतनी भीड़ है, मैं कैसे निकलूंगा? आप कुछ भी नहीं पूछेंगे, आप सिर्फ बाहर होने के प्रयास में लग जाएंगे; अगर आपको बोध हो जाए कि भवन में आग लगी हुई है।
अगर आपको दिखाई पड़ जाए कि संसार में आग लगी हुई है, और जीवन दुःख से घिरा है तो आपके भीतर बाहर निकलने की और संसार के ऊपर उठने की आकांक्षा पैदा हो जाएगी। आपके भीतर एक क्रांति संभव हो जाएगी। यह दुख कहीं से लाना नहीं है, वह चारों तरफ मौजूद है। मृत्यु कहीं से लानी नहीं है, उसकी कोई कल्पना नहीं करनी, वह निरंतर मौजूद है और प्रतिक्षण घट रही है। सच तो यह है कि हम खुद भी प्रतिक्षण मरते जा रहे हैं। जैसा मैं रोज कहता हूं कि हम प्रतिक्षण मरते जा रहे हैं। अगर हम अपने पर भी विचार करें तो हम पाएंगे हम काफी मर चुके हैं। हर आदमी जन्म के बाद मर रहा है, और धीरे-धीरे मरता जा रहा

है। जितने दिन आपके निकल गए हैं, उतने ही आप मर चुके हैं। थोड़े-बहुत दिन और होंगे और आपकी यह मरण की क्रिया पूरी हो जाएगी और आप समाप्त हो जाएंगे। एक, महाराष्ट्र में एक साधु था, एकनाथ। उसके पास एक व्यक्ति बहुत दिनों तक आया। और उस व्यक्ति ने अनेक दफा एकनाथ से बहुत से प्रश्न पूछे। एक बार उसने एक अजीब बात एकनाथ से पूछी, सुबह ही थी और एकनाथ अपने मंदिर में बैठे हुए थे। उस युवक ने आकर पूछा कि मैं आपको जानता हूं, बहुत दिन से जानता हूं और आपको जान कर मुझे कई तरह के विचार मन में उठते हैं, कई प्रश्न उठते हैं। एक प्रश्न मैं हमेशा छिपा लेता हूं, पूछता नहीं हूं, वह मैं आज पूछना चाहता हूं। एकनाथ ने कहा क्या है पूछो? उस युवा ने कहा कि मैं पूछना चाहता हूं, आपका बाहर से तो जीवन एकदम पवित्र है, लेकिन भीतर भी पवित्रता है या नहीं? आप बाहर से तो एकदम ही ईश्वरीय मालूम होते हैं, दिव्य मालूम होते हैं, लेकिन भीतर क्या है? मैं भीतर के संबंध में कुछ पूछना चाहता हूं? भीतर आपके पाप उठते हैं या नहीं? भीतर आपके बुराइयां पैदा होती हैं या नहीं? भीतर आपके विकार उठते हैं या नहीं?
एकनाथ ने कहा कि मैं अभी-अभी बताता हूं, एक और जरूरी बात तुम्हें बता दूं, कहीं मुझे भूल न जाए। कल अचानक मैंने तुम्हारा हाथ देखा तो मुझे दिखाई पड़ा कि तुम्हारी मृत्यु करीब आ गई है। सात दिन बाद तुम मर जाओगे तो यह मैं तुम्हें बता दूं और फिर तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूं, क्योंकि कहीं मुझे भूल न जाए, इसलिए मैं जल्दी बता दूं। एकनाथ ने कहा कि अब पूछो तुम क्या पूछते हो? वह युवक बैठा था खड़ा हो गया। उसने कहा कि मौका मिला तो मैं कल आऊंगा। उसके हाथ पैर कंपने लगे। एकनाथ ने पूछा इतनी जल्दी क्या है, सात दिन हैं, बहुत हैं, इतनी घबड़ाहट क्या है? और मरना तो सभी को पड़ता है। लेकिन वह युवक अब एकनाथ की बातें नहीं सुन रहा था। उसने पीठ फेर ली और वह मंदिर के नीचे उतरने लगा। अभी जब आया था तो पैरों में एक बल था, एक शक्ति थी, एक सामर्थ्य था। अब जब लौट रहा था तो दीवाल का सहारा लिए हुए था। जिसकी मौत सात दिन बात हो, वह बूढ़ा हो ही गया। उसके पैर कंपने लगे सीढ़ियों पर, वह रास्ते पर जाकर गिर पड़ा। बेहोश हो गया, लोगों ने उसे उठाया और घर पहुंचाया। उसके प्रियजन और उसके मित्र इकट्ठे हो गए, सब तरफ खबर फैल गई कि वह आदमी अब मरने के करीब है। सात दिन बात उसकी मृत्यु आ जाएगी।
सातवें दिन संध्या को जब सूरज डूबने को था और सारे घर के लोग रो रहे थे, पड़ोसी इकट्ठे थे और वह युवा बिस्तर पर लेटा हुआ था। एकनाथ उसके घर गए। वे जब अंदर पहुंचे तो वहां मौत का पूरा का पूरा वातावरण था। सारे लोग उनको देख कर रोने लगे। एकनाथ ने कहाः रोओ मत। मुझे जरा अंदर ले चलो। वे भीतर गए और उस व्यक्ति को उन्होंने हिला कर पूछा कि मेरे मित्र, एक बात पूछने आया हूं, सात दिन कोई पाप तुम्हारे भीतर उठा? कोई बुराई, कोई विकार। उस आदमी ने बहुत मुश्किल से आंखें खोलीं और उसने कहा कि आप भी एक मरते हुए आदमी से मजाक करते हैं। तो एकनाथ ने कहाः तुमने भी एक मरते हुए आदमी से मजाक किया था। एकनाथ ने कहा तुम्हारी मौत अभी नहीं आई है, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दिया है।
जिसे मौत दिखाई पड़ने लगे, उसके भीतर पाप उठने अपने आप विलीन हो जाते हैं। विकार शून्य हो जाते हैं। और जिसे मौत दिखाई पड़ने लगे, उसके भीतर एक क्रांति हो जाती है। उसकी संसार के प्रति पीठ हो जाती है। और परमात्मा की तरफ उसका मुंह हो जाता है। एकनाथ ने कहाः तुम्हारी मौत अभी आई नहीं, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दिया है। तुम उठ आओ, घबड़ाओ मत। और एकनाथ ने कहा कि सात दिन बाद मौत हो, या सात वर्ष बाद, या सत्तर वर्ष बाद, क्या फर्क पड़ता है? मौत का होना ही पर्याप्त है, दिनों की गिनती से कोई फर्क नहीं पड़ता है। या कि कोई फर्क पड़ता है? सात दिन बात मौत हो, या सत्तर दिन बाद, क्या फर्क पड़ता है? मौत का होना ही अर्थपूर्ण है। दिनों की गिनती कोई अर्थ नहीं रखती। एकनाथ ने कहाः मृत्यु है, जिस दिन यह मुझे पता चला, उसी दिन जीवन में क्रांति हो गई। उसी दिन मैं दूसरा आदमी हो गया।
हम सारे लोगों को यह पता नहीं है कि मौत है। हालांकि हम देखते हैं कि मौत घटित होती है, लेकिन हमें पता नहीं है कि मौत है। अगर हमें पता हो कि मौत है तो हमारे भीतर जीवन को जानने की प्यास पैदा हो जाएगी। जो इस जीवन को

ही जीवन समझ रहे हैं, उनके भीतर जीवन को जानने की प्यास कैसे पैदा हो सकती है? और जो इस जीवन को ही जीवन मान रहे हैं, वे वास्तविक जीवन को पाने के लिए असंतुष्ट कैसे हो सकते हैं? यह जीवन नहीं है। यह मृत्यु की ही लम्बी क्रिया है। जब तक यह स्पष्ट बोध हमारे भीतर न बैठ जाए, तब तक परमात्मा की दिशा में हमारे कदम उठ नहीं सकते। तब तक उन कदमों का उठना असंभव ही है। और सच में ही, अगर हम विचार करें तो इसे जीवन कैसे कह सकते हैं? मैं जिस दिन पैदा हुआ, जैसा मुझे दिखाई पड़ता है, मैं उसी दिन से मरना शुरू हो गया हूं। मौत कोई आकस्मिक, एक्सीडेंट नहीं है, कोई दुर्घटना नहीं है, एक क्रमिक विकास है, एक ग्रोथ है।
मैं जिस दिन से पैदा हुआ, मेरी मौत विकसित हो रही है। मेरे भीतर मौत घनी होती जा रही है। एक दिन मौत अपने पूर्ण बिंदु पर पहुंच जाएगी, आप समझेंगे कि उस दिन मौत हुई। मैं आपसे कहना चाहता हूं, मैं उसी दिन मरना शुरू हो गया, जिस दिन पैदा हुआ। जन्म का दिन और मृत्यु का दिन अलग-अलग नहीं है। जन्म का दिन ही मृत्यु का दिन है। हम क्रमशः मरते जाते हैं, लेकिन इसका हमें बोध नहीं है। और हम सोचते हैं मौत कभी आएगी, इसलिए निश्चिंत होते हैं। मौत प्रतिक्षण है। और जो कभी आने के ख्याल में हैं, गलती में हैं। और कभी यह विचार भी हम नहीं करते कि अगर हम जीवित होते तो मृत्यु आ कैसे सकती थी? यह कभी आपने ख्याल किया कि अगर आप जीवित होते तो मौत आ कैसे सकती थी? जीवन और मृत्यु तो विरोधी बातें हैं।
एक फकीर था, उससे जाकर किसी ने पूछा कि मैं समझने आया हूं कि मौत क्या है? उस फकीर ने कहा कि मौत पूछनी हो तो मुर्दों से पूछो, मैं एक जीवित आदमी हूं, मैं मृत्यु को जानता ही नहीं, बताऊंगा कैसे? उस फकीर ने कहाः अगर मौत के संबंध में पूछना है तो मुर्दों से जाकर पूछो। वे जानते होंगे। मैं एक जीवित आदमी हूं, मैं कैसे बताऊं कि मौत क्या है? मैं तो कभी मरा ही नहीं, और न मैं कभी मर सकता हूं। जीवन जीवन है।
एक और मुझे स्मरण आता है, एक आश्रम में एक साधु मर गया था। बहुत लोग रोने को, दुख प्रकट करने को वहां इकट्ठे हुए। उस आश्रम का जो प्रधान साधु था, लोगों की अपेक्षा थी कि वह भी आएगा। लेकिन वह तो आया नहीं। सारे आश्रम के लोग इकट्ठे हो गए, कोई पांच सौ भिक्षु थे वे। सारे लोग इक ट्ठे हो गए, लेकिन जो प्रमुख था, जो गुरु था आश्रम का, वह नहीं आया। जब लाश... बिल्कुल बंधने की तैयारी हो गई, और लोगों ने अर्थी तैयार कर ली, तब भागा हुआ वह बूढ़ा आदमी आया, और उसने कहा कि मैंने एक बड़ी आश्चर्यजनक खबर सुनी है कि वह साधु मर गया। उसने कहाः मैंने बड़ी आश्चर्यजनक खबर सुनी है कि वह फलां-फलां साधु मर गया। लोगों ने कहाः इसमें आश्चर्य की क्या बात है? उसने कहाः मैं भी जरा देखना चाहूंगा कि वह मरा हुआ साधु कहां है? वह अंदर गया, वहां उस साधु के मित्र सब रोते थे, उसकी लाश पड़ी थी, उसने जाकर, उस बूढ़े आदमी ने जाकर पूछाः इ.ज दिस मैन डेड और अलाइव? तो लाश पड़ी थी, और उस बुड्ढे ने जाकर पूछाः यह आदमी जिंदा है या मरा हुआ? तो लोगों ने कहाः यह भी कोई पूछने की बात है? अरथी बंध रही है, श्वासें समाप्त हो गई हैं, और लाश आपको दिखाई नहीं पड़ती? उसने कहा कि मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं, मुझे तो यह दिखाई पड़ता है कि जो जिंदा था, वह अब भी जिंदा है, जो मुर्दा था, वह अब भी मुर्दा है। दोनों का संबंध टूट गया है। इस आदमी के भीतर जो जिंदा था, वह अभी भी जिंदा है, और जो मुर्दा था, वह अभी भी मुर्दा है, दोनों का संबंध टूट गया है। इसलिए जब तुम कहते हो, वह साधु मर गया तो मुझे हैरानी होती है, क्योंकि जो जीवित था वह मर कैसे सकता है? जीवन और मृत्यु तो विरोधी बातें हैं।
जैसे अगर मैं आपसे पूछूं कि सफेद रंग क्या काला रंग भी हो सकता है? आप कहेंगे सफेद रंग काला कैसे हो सकता है, और काला हो जाएगा तो सफेद नहीं रह जाएगा। और सफेद रहेगा तो काला नहीं हो पाएगा। सफेद रंग, सफेद रंग है, काला रंग, काला रंग है। मृत्यु, मृत्यु है जीवन, जीवन है। जीवन कभी भी मृत्यु नहीं हो सकता, और मृत्यु कभी जीवन नहीं हो सकती है। और इसीलिए जब अंत में मृत्यु आती है तो समझ लेना चाहिए कि जिसे हमने जन्म समझा था, वह जीवन का प्रारंभ नहीं था, मृत्यु का ही प्रारंभ था। क्योंकि जो प्रथम में होता है, वहीं अंत में विकसित हो जाता है। जो बीज में होता है, वही वृक्ष बन जाता

है। मृत्यु अंतिम वृक्ष है, तो जन्म में मृत्यु का बीज छिपा होगा। जन्म जीवन का प्रारंभ नहीं है। वह मृत्यु का ही प्रारंभ है।
फिर जीवन क्या है? उस जीवन के प्रति प्यास तभी पैदा हो सकती है, जब हमें यह स्पष्ट बोध हो जाए, हमारी चेतना इस बात को ग्रहण कर ले कि जिसे हम जीवन जान रहे हैं, वह जीवन नहीं है। जीवन को जीवन मानकर कोई व्यक्ति वास्तविक जीवन की तरफ कैसे जाएगा? जीवन जब मृत्यु की भांति दिखाई पड़ता है तो अचानक हमारे भीतर कोई प्यास, जो जन्म-जन्म से सोई हुई है, जागकर खड़ी हो जाती है, हम दूसरे आदमी हो जाते हैं। आप वही हैं जो आपकी प्यास है। अगर आपकी प्यास धन के लिए है, मकान के लिए है, अगर आपकी प्यास पद के लिए है, तो आप वही हैं, उसी कोटि के व्यक्ति हैं। अगर आपकी प्यास जीवन के लिए है तो आप दूसरे व्यक्ति हो जाएंगे। आपका पुनर्जन्म हो जाएगा।
आज के दिन आकांक्षा कैसे पैदा हो? उस सिलसिले में मैं यह कहना चाहता हूं कि जीवन का भ्रम छोड़ दें। और जिसे जीवन समझ रहे हैं, उसे मृत्यु की भांति देखना प्रारंभ करें। और यह कोई मेरे कहने से नहीं, अगर किसी के कहने से प्रारंभ किया तोझूठा होगा, थोथा होगा, आप खुद ही देखें, आंखें खोलें और देखें, ये जहां इतने लोग बैठे दिखाई पड़ रहे हैं, इनमें आपको मुर्दे दिखाई पड़ते हैं या जीवित लोग दिखाई पड़ते हैं? ये जो सारी सड़कों पर लोग जा रहे हैं, ये जीवित लोग हैं या मरे हुए लोग हैं? अगर आपको ये जीवित लोग दिखाई पड़ते हैं, तो फिर धर्म के विचार को छोड़ दें, सत्य के ख्याल को छोड़ दें, फिर उसमें अभी आपके जाने का मौका नहीं आया, अभी भूमिका नहीं बनी। और अगर आपको ये मुर्दे दिखाई पड़ते हैं तो आपके जीवन में क्रांति का क्षण करीब आ गया, भूमिका तैयार हो गई। इससे क्या फर्क पड़ता है कि आपकी सबकी तारीखें लगी हुई हैं कि कौन कब मुर्दा हो जाएगा, आप सबके ऊपर तारीखें लगी हुई हैं। किसी की दो साल बाद, किसी की दस साल बाद, किसी की बीस साल बाद; सबके ऊपर चिट लगी हुई है कि कौन कब मुर्दा हो जाएगा? लेकिन जो देख सकता है, उसे तो आप सभी मुर्दे दिखाई पड़ेंगे। कोई देर-अबेर मरेगा यह दूसरी बात है, लेकिन सारे लोग मरेंगे, सारे लोग मर रहे हैं, वस्तुतः सारे लोग मर गए हैं।
आपने सुना होगा बुद्ध को... उनके पिता ने बहुत सम्हाल-सम्हाल कर रखा, क्योंकि बचपन में ज्योतिषियों ने एक बात कह दी, बुद्ध के जन्म पर ज्योतिषि बुलाए गए और उन्होंने कह दिया कि इस व्यक्ति की दो ही संभावनाएं हैं इसके जीवन में--या तो यह चक्रवर्ती राजा हो जाएगा और या फिर भिखारी, संन्यासी हो जाएगा।
सिद्धार्थ के, गौतम के पिता ने कहा कि कैसे मैं इसे चक्रवर्ती होने के लिए बचाऊं? तो ज्योतिषियों ने कहाः इसे इस भांति रखें कि इसे जीवन दिखाई न पड़े। अगर इसे जीवन दिखाई पड़ गया, तो फिर यह संन्यासी हो जाएगा। असल में जिसको भी जीवन दिखाई पड़ जाएगा, वह संन्यासी हो जाएगा। जिसको जीवन नहीं दिखाई पड़ेगा, वही संन्यासी नहीं हो सकता है। तो उसके पिता ने उसे छिपाने की कोशिश की।
अब जीवन से कैसे छिपाया जाएगा? जीवन तो चारों तरफ है, उसे कैसे छिपा सकते हैं? तो उसने ज्योतिषियों से पूछा कि जीवन से मैं कैसे छिपाऊंगा? तो ज्योतिषियों ने कहाः एक ही काम करोः अगर मृत्यु से छिपा लो, जीवन से छिपा लिया। इसे मृत्यु का पता न चले।
तो बड़ी व्यवस्था की गई, वे तो राजपुत्र थे, सारी सुविधा थी, उनकी बगिया में कोई फूल कुम्हला जाता था तो उसे हटा दिया जाता था रातोंरात। कोई पत्ता सूख जाता था तो रात में उसे हटा दिया जाता था। कहीं सुबह सूखे हुए पत्ते को देख कर मृत्यु का पता न चल जाए। कुम्हलाया हुआ फूल कहीं मृत्यु का बोध न दे दे। उनके महल के आस-पास युवक और युवतियों के सिवा कोई भी नहीं आ सकता था। कोई बूढ़ा नहीं आ सकता था, क्योंकि बूढ़ा कहीं यह ख्याल न दे दे कि मृत्यु होती है। बुद्ध को यूं छिपा कर पाला गया।
एक युवक महोत्सव उनके गांव में था और बुद्ध उसमें भाग लेने गए।
रास्ते पर पहली दफा उन्होंने देखा एक बूढ़ा आदमी, बुद्ध ने अपने सारथी को पूछा कि इस आदमी को क्या हो गया है? सारथी ने कहाः यह आदमी बूढ़ा हो गया।
जवानी के बाद की अवस्था है। बुद्ध ने कहाः अवस्थाएं भी होती हैं क्या?

क्या मैं भी युवा होने के बाद इसी भांति बूढ़ा हो जाऊंगा? बड़ी अदभुत बात है, बुद्ध ने सीधा यह पूछा--क्या मैं भी बूढ़ा हो जाऊंगा? जब आप किसी बूढ़े को देखते हैं तो क्या पूछते हैं अपने से कि मैं भी बूढ़ा हो जाऊंगा? आप सोचते हैं, यह आदमी बूढ़ा हो गया। लेकिन यह घटना आपसे संबंधित नहीं हो पाती। आपको यह नहीं दिख पाता कि इस आदमी के बूढ़ा होने में मैं भी बूढ़ा हो गया हूं।
जब एक फूल कुम्हला कर गिरता है, तो आप देखते हैं, फूल कुम्हला कर गिर गया। लेकिन यह फूल का कुम्हलाना आपसे संबंधित नहीं हो पाता। क्या आपको यह दिखाई पड़ता है कि फूल के कुम्हलाने में आप भी कुम्हला गए? अगर नहीं दिखाई पड़ता, तो प्यास कैसे पैदा होगी? बुद्ध ने कहाः तब तो मैं भी बूढ़ा हो गया। रथ वापस लौटा लो, युवक महोत्सव में जाकर क्या करेंगे? मैं तो बूढ़ा हो गया, वह तो युवकों का महोत्सव है, वह तो यूथ फेस्टीवल है, मैं वहां जाकर क्या करूंगा? रथ वापस लौटा लो, मैं तो बूढ़ा हो गया। सारथी ने कहाः आप कैसे पागल हैं, वह आदमी बूढ़ा हुआ है, आप कहां बूढ़े हुए? और तभी एक मुर्दे की लाश निकली। और बुद्ध ने पूछाः यह क्या हुआ? और सारथी ने बतायाः यह आदमी मर गया। बुद्ध ने पूछाः क्या मैं भी मर जाऊंगा? यह बड़ी अर्थपूर्ण बात है कि वे पूछ रहे हैं कि क्या हुआ? ज्ञान हुआ कि आदमी मर गया। बुद्ध पूछते हैं, क्या मैं भी मर जाऊंगा? जीवन से सारे तथ्य मैं से संबंधित हो जाएं तो क्रांति हो जाती है। उसने कहाः मैं कैसे कहूं अपने मुंह से, लेकिन कोई भी अपवाद नहीं हो सकता, आप भी अपवाद नहीं हो सकते। मरना ही होगा। जो जन्मा है उसे मरना ही होगा। बुद्ध ने कहाः फिर मैं मर गया। रथ वापस लौटा लो, मुर्दे महोत्सव में नहीं जाया करते। इसलिए मैंने कहा कि हम सब मुर्दे हैं... और रथ वापस लौटा लिया गया। और उस युवक की जिंदगी में क्रांति हो गई।
जीवन के तथ्यों को स्वयं से संबंधित करें, जीवन में जो घट रहा है उसे अपने पर घटा हुआ जाने, क्योंकि कोई भी अपवाद नहीं है।
वे जो कब्रें बनी हैं, जब मैं उनके करीब से निकलता हूं तो जानता हूं कि मेरी ही कब्रें हैं। आखिर वे किसकी कब्रें होंगी? निश्चित ही वे मेरी ही कब्रें हैं, वे आपकी ही कब्रें हैं। अगर जीवन की यह सारी की सारी स्थिति के प्रति सजगता आ जाए, तो आप पांएगें, आप एक बड़े सपने में हैं, और वह भी एक बड़े दुखद सपने में हैं। और यह बोध, यह पीड़ा ही एक क्रांति आपके भीतर कर सकेगी। जीवन के दुख को जानना, वास्तविक जीवन के प्रति प्यास को पैदा करने का प्रारंभ है--जीवन की व्यर्थता को जानना।
हम तो सब सार्थक समझते हैं जीवन को। हमें प्रतीत होता है कि बड़ी सार्थकता है। और हम कभी ख्याल नहीं करते कि हमसे पहले अरबों-अरबों लोग इस जमीन पर रहे हैं, और उन्होंने भी इसे सार्थक समझा है, और एक दिन पाते हैं कि सब व्यर्थ हो जाता है। एक दिन मिट्टी मिट्टी में मिल जाती है। एक दिन पाते हैं कि सब गिर गया और समाप्त हो गया। जिसे हम बड़ा सार्थक और बड़ा अर्थपूर्ण समझ रहे हैं, मृत्यु के क्षण में वह क्या होगा? सब विलीन हो जाएगा और सब मिट्टी हो जाएगा। जीवन की सार्थकता के प्रति जो जागेगा, वह पाएगा कि जीवन व्यर्थ है। बिल्कुल ही मीनिंगलेस है। उसमें कोई अर्थवत्ता नहीं है। और जो जीवन को गौर से देखेगा पाएगा, वहां तो मृत्यु ही छिपी हुई है। हर जीवित आदमी के पीछे मृत्यु छिपी हुई है। और अगर यह बोध हो जाए, अगर यह दिखाई पड़ने लगे, जरा गौर से देखें आप अपने पड़ोसी के बगल में जरा झांक कर देखें कि क्या इस आदमी के भीतर मौत बैठी हुई है? तो आपको दिखाई पड़ेगी, और जब उसमें दिखाई पड़ेगी तो आप अपने भीतर गौर करें कि क्या आपके भीतर मौत बैठी हुई है? तो आपको अनुभव होगा कि मौत बैठी हुई है। इस मौत का बोध हो जाए, इसकी तरफ ध्यान चला जाए तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। जिसे हम जीवन कहते हैं, वह व्यर्थ हो जाएगा। और वह व्यर्थ हो तो ही जिसे लोगों ने जीवन जाना है जो वास्तविक जीवन है, उसकी तरफ आंख उठनी प्रारंभ होती है। एक प्यास पैदा होती है। तब हम जानना चाहते हैं कि क्या सत्य है? क्या सार्थक है? क्या अर्थ है?
एक गांव में मैंने सुना, दो आदमी पागल थे। ऐसा गांव के लोग समझते थे कि दोनों पागल हैं। एक दिन बाजार भरा हुआ था, गांव का और एक रास्ते पर जहां काफी भीड़ थी, वे दोनों पागल भी आए। उन दोनों पागलों ने झुक कर एक दूसरे को नमस्कार किया। एक युवक खड़ा हुआ देखता था, उसे बड़ी हैरानी हुई, क्योंकि लोग

गांव के जानते थे, वे दोनों पागल हैं। उसे यह हैरानी हुई कि उन दोनों पागलों में इतना होश है कि एक दूसरे को नमस्कार करते हैं। उसे थोड़ा शक हुआ कि ये पागल हैं भी या नहीं। उन दो पागलों में से एक के पीछे वह युवक चला गया। वह पागल एक मस्जिद के पास पड़ा रहता था। वह युवक गया और उसने पूछा कि मैं यह पूछने आया हूं कि आपने उस भीड़ में उसी पागल को नमस्कार क्यों किया? क्या आप पहचानते हैं, क्या पागलों की भी जाति बिरादरी है? क्या पागलों का भी कोई संबंध होता है? क्या पागल भी आपस में किसी भांति एक-दूसरे के मित्र हैं? क्या पागलों का भी अपना कोई समाज है? उस भीड़ में इतने लोग थे, आपने उस पागल को नमस्कार किया और उस पागल ने भी आपको ही नमस्कार किया। वह बूढ़ा पागल हंसने लगा। वह उठा और उस युवक को उसने अपनी बांहों में भर लिया, अपनी छाती से लगा लिया। और उससे कहा कि मेरी आंखो में देखो। युवक तो पहले घबड़ा भी गया, इस उत्तर की कोई अपेक्षा नहीं थी, वह उसे छाती में दबा लेगा और उससे कहेगा मेरी आंखों में देखो।
उस युवक ने पहली दफा उसकी आंखों में देखा। उसकी आंखों में देखकर वह हैरान हो गया, वे आंखें कुछ अलग थीं। वे कोई सामान्य आदमी की आंखें नहीं थी, वे कोई सोए हुए आदमी की आंखें नहीं थीं। उसने उन आंखों को देखा और उस बूढ़े ने कहाः अब तुम जाओ, और उस भीड़ में जो लोग हैं उनकी भी आंखों को देखना। और वह जिस पागल को मैंने नमस्कार किया था उसकी भी आंखों को देखना। वह युवक गया, उसने अनेक लोगों की आंखों में गौर से देखा और वह उस पागल के पास भी गया और उसकी आंखों में भी देखा। वापस आया, उसने कहा मैं हैरान हो गया, यह दो आंखें भर जगी हुई मालूम पड़ती हैं, बाकी सारी आंखें सोई हुई मालूम पड़ती हैं। बाकी लोग ऐसे चल रहे हैं जैसे सोए हुए हों। बाकी लोग देखते हुए भी ऐसे मालूम होते हैं, जैसे उनका ध्यान कहीं और है। देख रहे हैं, लेकिन देख नहीं रहे। चल रहे हैं, लेकिन चल नहीं रहे। जैसे कोई सपने में चलता हो। जैसे सपने में चलने की बीमारी होती है। लोग सपने में उठते हैं और चलते हैं, जैसी धुंधली उनकी आंखें होती हैं, जैसी सोई हुई और मूर्च्छित उनकी आंखें होती हैं, ऐसी ही सारे लोगों की आंखें हैं, सिर्फ उस पागल को छो.ड़ कर। उस वृद्ध ने कहाः मैंने उसे नमस्कार किया, कुछ सोच कर ही नमस्कार किया। गांव हमें पागल कहता है, क्योंकि हम गांव जैसे नहीं हैं। हम पूरे गांव को पागल समझते हैं। हम पूरे गांव के लोगों को सोया हुआ समझते हैं। और सच यही है, ये इतनी भीड़ है, ये इतने लोग हैं, ये करीब-करीब सोए हुए और मरे हुए लोग हैं। इनकी आंखों में कोई जागा हुआ पन नहीं है। इनके भीतर कोई बोध नहीं है। जीवन को देख नहीं रहे, अन्यथा इनकी यह गति नहीं हो सकती थी, जो यह है।
यह दुनिया इतनी बद्तर नहीं हो सकती थी, अगर इसमें जागे हुए लोग हों।
ये दुनिया इतनी हिंसक नहीं हो सकती थी। इतनी क्रूर नहीं हो सकती। इतनी करप्टेड नहीं हो सकती, इतना अनाचार नहीं हो सकता, अगर लोग जगे हुए हों। इस दुनिया में इतनी दुर्घटनाएं और पीड़ाएं नहीं हो सकतीं, अगर लोग जगे हुए हों। इस दुनिया में इतना शोषण नहीं हो सकता अगर, लोग जगे हुए हों। लेकिन सारे लोग सोए हुए हैं, और सोए हुए लोग जिस दुनिया को बनाएंगे, वह तो ऐसी दुनिया होगी ही, इसमें कोई शक भी नहीं है। ये दुनिया बदतर से बदतर होती जाएगी, अगर लोगों की संख्या और ज्यादा से ज्यादा सोती चली जाएगी।
हम करीब-करीब सोए हुए और मरे हुए लोग हैं। और उसकी वजह से सारी दुनिया में सड़ांद हैं, सारी दुनिया में मुर्दों का अधिकार है, सारी दुनिया में ऐसे लोग जिनका जीवन से कोई संबंध नहीं है, वे लोग सारी गंदगी, सारी परेशानी, सारा उपद्रव पैदा कर रहे हैं। धर्म चाहता है कि मनुष्य जाग जाए। और धर्म इसलिए एक तरह का पागलपन सिखाना चाहता है। जागा हुआ आदमी पागल मालूम होता है। क्राइस्ट पागल मालूम हुए इसलिए सूली लगा दी। सुकरात पागल मालूम हुआ, इसलिए जहर दे दिया। इस मुल्क में भी लोगों को गांधी पागल मालूम हुए, इसलिए गोली मार दी। जागा हुआ आदमी पागल मालूम होगा, क्योंकि वह सामान्य लोगों से बिल्कुल भिन्न दुनिया से संबंधित हो जाता है। जिसे आप जीवन कहते हैं, उसे वह मृत्यु कहेगा। जिसे आप सुख कहते हैं उसे वह दुख कहेगा। जिसे आप समझ कहते हैं, उसे वह अत्यंतिक मूर्खता कहेगा तो निश्चित ही वह पागल मालूम होगा।

संत फ्रासिंस हुआ असिसी में। वह जब भी किसी गांव में जाता तो वह एक घंटा बजा कर जोर से चिल्लाता था कि आओ, मैं तुम्हें एक पागलपन सिखाऊं। लोग कहते, पागलपन सिखाने आए हो, और वह असीसि का जो फकीर था, फ्रांसिस, वह कहता, अब तक जितने भी मेरे जैसे लोग आए हैं, उन सभी ने पागलपन सिखाया है। क्योंकि पागलपन का अर्थ ही है कि तुमसे कुछ भिन्न हो जाना, तुमसे कुछ अलग हो जाना, और जो उस भांति अलग हो पाते हैं, वे ही केवल सत्य को जान पाते हैं। वे ही केवल जीवन के अर्थ को जान पाते हैं। दुनिया में थोड़े से पागल हुए हैं जिन्होंने जीवन को जाना है और दुनिया इन समझदारों से भरी हुई है जो कि जीवन को बिल्कुल भी नहीं जानते हैं।
इस समझदारी को छोड़ देना पड़ेगा, जिसे आप समझदारी समझ रहे हैं। यह समझदारी झूठी है और इसके कोई आधार नहीं हैं, यह बिल्कुल निराधार और बेईमानी है। अगर यह समझदारी आपको मूर्खतापूर्ण मालूम होने लगे, यह समझदारी जिसको आप कहते हैं, यह जो आपकी दुनियादारी की समझदारी है। अगर यह आपको मूर्खतापूर्ण मालूम होने लगे तो ही आपके भीतर कोई प्यास पैदा हो सकती है। और यह तभी मालूम होगी जब इसमें दुख और मृत्यु दिखाई पड़े।
मृत्यु को देखना, मृत्यु से स्वयं को संबंधित कर लेना, प्राथमिक शर्त
है परमात्मा की प्यास की। अगर ऐसा नहीं है तो प्यास झूठी होगी, फिर आप गीता पढ़ें, कुरान पढ़ें कि बाइबिल पढ़ें, सब पढ़ें, आपकी प्यास झूठी होगी। इसका कोई मतलब नहीं है। उस तरह पढ़ने वाले लोग हैं। उस तरह मंदिर और मस्जिद हैं, उनका कोई उपयोग नहीं है, जिसे जीवन अभी सार्थक मालूम हो रहा है। उसे मंदिर और मस्जिद सब व्यर्थ हैं, उनका कोई उपयोग नहीं है। उसे गीता कुरान सब व्यर्थ हैं, उनका कोई उपयोग नहीं है। जिसे जीवन मृत्यु दिखाई पड़े, उसके लिए नये अर्थ का संसार खुलना शुरू हो जाता है।
मैं चर्चा करूंगा पीछे कि कैसे वह नया संसार खुल सकता है? आज तो मैं आपसे यही कहूं कि थोड़ा सा यह पागलपन आपमें आना जरूरी है, यह थोड़ी सी मैडनेस, आप में आनी जरूरी है कि जीवन आपको व्यर्थ, अर्थहीन, मृत्यु से भरा हुआ दिखाई पड़े। यह दिख सकता है। जीवन ऐसा है, जीवन बिल्कुल ऐसा है, इसलिए दिख सकता है। सिर्फ आंख खोलने की बात है और आपको जीवन दिखाई पड़ेगा कि यह क्या है? जरूर घबड़ाहट होगी, जरूर बेचैनी होगी, जरूर परेशानी होगी क्योंकि इस दुनिया को मुर्दा देखना, जीवित लोगों को मरा हुआ देखना, अपने को आज ही मरा हुआ जानना बहुत सी घबड़ाहट पैदा करेगा। उसी घबड़ाहट से गुजर जाने का नाम तपश्चर्या है। तपश्चर्या का यह अर्थ नहीं कि धूप में खड़े हैं, तपश्चर्या का अर्थ नहीं कि उपवास कर रहे हैं, भूखे मर रहे हैं; तपश्चर्या का अर्थ नहीं है कि नंगे खड़े हो गए।
तपश्चर्या का अर्थ है, चित्त ऐसी स्थिति से गुजर जाए, जहां कि बहुत बेचैनी, बहुत घबड़ाहट है, जहां कि बहुत फीयर मालूम होता है कि यह कैसे होगा? और अगर आप उस तप के लिए राजी हो जाएं तो आप एक क्रांति एक अदभुत क्रांति, एक अभिनव क्रांति अपने भीतर अनायास घटित होती हुई पाएंगे। आप दूसरे मनुष्य हो जाएंगे। प्यास मनुष्य को बदल देती है। और दुख का स्मरण, मृत्यु का बोध, जीवन की व्यर्थता का बोध प्यास को उत्पन्न करता है। जीवन से असंतुष्ट हो जाना, परम जीवन के प्रति दिशा में पहला धक्का है। इसलिए मैंने यह चर्चा की, इससे आकांक्षा पैदा होगी। इससे तीव्र आकांक्षा पैदा होगी, इससे बहुत जलन पैदा होगी, इससे बहुत असंतोष पैदा होगा, इससे बहुत ज्वालाएं पकड़ लेंगी मन को और आप बड़े कष्ट में पड़ जाएंगे।
परमात्मा करे आप ऐसे कष्ट में पड़ जाएं, क्योंकि उसके बिना कोई जन्म नहीं होता है। परमात्मा करे आप ऐसी लपटें अनुभव करें, क्योंकि उसके बिना कोई जीवन की तरफ ऊपर नहीं उठता है। जो नीचे तृप्त हैं, वे नीचे ही समाप्त हो जाते हैं। जो जितने नीचे तृप्त हैं वे उतने ही जल्दी समाप्त हो जाते हैं। इसलिए तृप्ति न खोजें, बल्कि ऊंचे से ऊंची अतृप्ति खोजें, जितनी ऊंची अतृप्ति होगी, उतनी आपकी गति, उतना आपका विकास संभव हो जाता है। अपने भीतर असंतोष को पालें, जीवन के प्रति असंतोष को, स्वयं के होने के प्रति असंतोष को, जितना आप पालेंगे उतना साधना में आपका, आपके चरण, आपकी भूमिका परिपक्व होती है। आकांक्षा पैदा हो, प्यास पैदा हो, अभीप्सा बने, ऐसी अभीप्सा कि

फिर उसके साथ जीना मुश्किल हो जाए, या तो उसे हल करना पड़े, और या फिर खुद को समाप्त कर लेना पड़े।
एक छोटी सी कहानी और मैं अपनी चर्चा को आज पूरा करूंगा।
एक मुसलमान फकीर था फरीद, एक छोटे से गांव में एक झोपड़े में रहता था।
एक नदी के किनारे रहता था। अनेक-अनेक लोग उससे पूछने आते थे, ईश्वर है? आत्मा है? वह फरीद बड़ा अजीब था। जब भी कोई उसके पास आता, वह कहता, सच में उत्तर चाहते हो तो चलो मेरे साथ। पहले स्नान कर लें, फिर नदी के किनारे बैठ कर पवित्र होकर, मैं तुम्हें उत्तर दूंगा। जो भी उससे राजी होता उसे पहले नदी पर ले जाता, नदी गहरी थी। वे दोनों साथ नहाने उतरते। और जैसे ही वह दूसरा व्यक्ति जिसने पूछा था पानी में उतरता, वह फरीद तगड़ा फकीर था, उसकी गर्दन पानी में नीचे दबा देता। उसके प्राण छटपटाने लगते। वहां श्वास के लिए प्राण पागल हो जाते और वह फकीर दबाते ही चला जाता। जब तक कि प्राण बिल्कुल टूटने के करीब ही न आ जाएं, तब तक वह छोड़ता नहीं था।
लेकिन कितना ही कमजोर आदमी क्यों न हो, जब प्राणों पर बन आती है तो अपनी पूरी ताकत लगाता है। बाहर निकलने के लिए वह जुगत नहीं पूछता, वह पूरी ताकत लगाता है। फरीद बहुत मजबूत था, लेकिन वह तभी छोड़ता था, जब नीचे वाला अपनी ताकत से ही ऊपर उठ आए। ऐसे ही एक दिन एक आदमी को उसने छोड़ा। उस आदमी ने कहाः क्या आप हत्यारें हैं, या साधु हैं? यह क्या कर रहे थे? मेरी जान लेने की कोशिश थी। मैं पूछने आया कि ईश्वर कहां है? और आप मेरे प्राण लिए लेते हैं। फरीद ने कहा उसी की तरफ दिशा निर्देश करने के लिए यह सब मुझे करना पड़ा। इसलिए नदी के किनारे रहता हूं। ताकि जल्दी से कोई भी आए पूछने तो नदी में ला सकूं, क्योंकि बिना नदी में लाए कोई उत्तर नहीं है। उसने पूछा यह कौन सा उत्तर हुआ? फरीद ने कहा कि जब तुम्हें मैं नीचे दबाए हुए था तो तुम्हारे प्राणों में कितनी आकांक्षाएं थीं। उसने कहाः आकांक्षाएं? बहुवचन में पूछते हैं। एक ही आकांक्षा थी कि एक सांस हवा मिल जाए, किसी तरह और वह भी थोड़ी देर तक थी। फिर तो मुझे पता नहीं कि वह भी थी या नहीं। लेकिन सारे प्राण मेरे उसी के लिए प्यासे थे। मेरा कण-कण उसी के लिए प्यासा था और मैं तो कमजोर हूं, लेकिन मुझमें एक अदभुत ताकत मालूम हुई और मैं ऊपर उठने लगा। मैं जहां हवा उपलब्ध हो सकती थी, उस तरफ ऊपर उठने लगा।
फरीद ने कहाः जिस दिन ईश्वर के लिए ऐसी प्यास होगी, उस दिन ईश्वर इतने निकट है जितने कि निकट श्वास है-- उतने ही निकट। लेकिन अगर उतनी प्यास न होगी, तो ईश्वर बहुत दूर है, जितने कि दूर कोई भी चीज हो सकती है। प्यास प्रभु को निकट ले आती है, प्यास का न होना ही दूरी है। तो मैंने आपसे कहाः अगर प्यास है तो परमात्मा करीब है, बढ़ाएं और ेपरमात्मा निकट है। लेकिन अगर प्यास नहीं है, तो खोजें पहाड़ों पर, हिमालय में, तीर्थस्थानों में, जमाने में खोजें परमात्मा कहीं भी नहीं है। अगर प्यास नहीं है तो परमात्मा कहीं भी नहीं है। और अगर प्यास है, तो इसी क्षण है और यहीं है। प्यास ही रूपांतर है। इसलिए प्यास पहली सीढ़ी है, सत्य की खोज में प्यास पहला चरण है। और प्यास कैसे पैदा होगी? उसके संबंध में थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं, जीवन को देखने से, जीवन के सत्य के प्रति जागने से प्यास पैदा होती है। जागें और देखें और किसी शास्त्र में खोजने न जाएं, क्योंकि जीवन चारों तरफ है और शास्त्र सब मुर्दा हैं। जीवन को देखना है, चारों तरफ जीवन है। प्रतिक्षण जीवन है। लोग मुझसे पूछते हैं, क्या अध्ययन करें सत्य को जानने को? मैं कहता हूं जीवन का अध्ययन करें। क्योंकि शास्त्र के अध्ययन से कुछ भी नहीं मिलेगा। जो मिलेगा वह जीवन के अध्ययन से मिलता है। जीवन को देखें, पहचानें, जागें, ध्यान को उस तरफ ले जाएं, और तथ्यों के प्राणों में उतरने की कोशिश करें, और हर तथ्य को अपने से जोड़ लें, आप पाएंगे कि आप क्रमशः दूसरे मनुष्य होते जा रहे हैं। प्यास जग रही है और आपके भीतर प्यास के साथ शक्ति जग रही है। प्यास जग रही है और उसके साथ-साथ आप परमात्मा की तरफ ऊपर उठना प्रारंभ हो गए हैं।
ये थोड़ी सी बातें ही आज मैंने आपसे कहीं, ये बातें थोड़ी हैं, प्यास से छोटा शब्द और क्या होगा? लेकिन प्यास से बड़ी और कोई बात नहीं है। अगर जीवन में सच में कोई आकांक्षा है तो प्यास की पीड़ा को पैदा करना होगा। उस कष्ट

से, उस तप से गुजरना होगा। शेष कैसे हम आगे, इस प्यास के होने के बाद आगे जा सकते हैं, उसकी मैं चर्चा आगे करूंगा।

मेरी बातों को प्रेम से और शांति से सुना है, उसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं, और सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन की खोज
दूसरा प्रवचन

मार्ग

मेरे प्रिय आत्मन्!
सत्य की खोज में या जीवन के अर्थ की खोज में, जो सबसे पहली बात, सबसे पहली भूमिका आवश्यक है, उसके संबंध में हमने विचार किया। जैसा मुझे दिखाई पड़ता है वह मैंने आपसे कहा, यदि प्यास न हो तो हमारे भीतर जीवन के अर्थ की प्राप्ति का कोई प्रारंभ भी नहीं हो पाता है। प्यास ही बीज है और प्यास का बीज ही विकसित होता है, अंकुरित होता है, मनुष्य के जीवन में सार्थक होता है। प्यास कैसे पैदा हो, उसके संबंध में थोड़ा सा विचार हमने किया।
जीवन को यदि हम देखें और जीवन की सच्चाई को देखें तो जिसे अब तक हम संतुष्टि मान रहे हैं, वहीं असंतोष के अंकुर शुरू हो जाएंगे। और जिन बातों से अभी हम तृप्त हैं, वे ही बातें हमें अतृप्त करती हैं। और जो अभी हमें प्रकाश मालूम हो रहा था, वही अंधकार मालूम होने लगेगा। और जो जीवन मालूम हो रहा है, वही मृत्यु के जैसा दिखाई पड़ेगा। अभी जिसे हमने सब कुछ समझा हुआ है, प्रतीत होगा, वह कुछ भी नहीं है और हम एक बड़े स्वप्न में हैं। यदि यह प्रतीति न हो, अगर यह अनुभव न हो तो प्यास पैदा नहीं होती है। जीवन का दुख और जीवन का मृत्यु में विलीन हो जाना, मनुष्य के भीतर परमात्मा की खोज बनती है, इस संबंध में हमने विचार किया। और यह भी मैंने आपसे कहा कि अगर इस ओर ध्यान न जाए, अगर मनुष्य के अंतस की ओर ध्यान की धारा प्रवाहित न हो, तो हमें ज्ञात भी नहीं हो पाता कि भीतर कौन है? हम केवल उन्हीं बातों को जानने में समर्थ हो पाते हैं, जिस ओर हमारे ध्यान की धारा होती है। जिस ओर हमारे चित्त की धारा होती है, जिस ओर हमारे अंतस की दृष्टि होती है, वही केवल सत्तावान हो जाता है, और जिस ओर हमारे अंतस की दृष्टि नहीं होती है, उसी की सत्ता खो जाती है।
एक छोटी सी कहानी मैं कहूंगा, और फिर आज की चर्चा प्रारंभ करूंगा।
एक मुसलमान बादशाह के जीवन में उल्लेख है, वह जंगल में शिकार को गया। सूरज ढल गया, सांझ हो गई, वह गांव नहीं लौट पाया, वह रास्ता भटक गया। तो उसने जंगल की ही एक पगडंडी पर बैठ कर, संध्या की प्रार्थना की, जब वह संध्या को प्रार्थना करने बैठा, वह प्रार्थना करने बैठा ही है, परमात्मा की इबादत के लिए उसने सिर कोझुकाया ही है कि एक भागती हुई युवती उसको धक्का देती हुई, करीब-करीब उसके प्रार्थना के वस्त्र पर से निकलती हुई, जंगल की ओर चली गई। उसे बहुत क्रोध आया और उसके मन को हुआ कि यह कैसी नासमझ, कैसी अशिष्ट स्त्री है, इसे यह भी पता नहीं कि कोई प्रार्थना कर रहा है, फिर इसे यह भी ध्यान नहीं कि देश का बादशाह प्रार्थना कर रहा है और उसे धक्का नहीं देना चाहिए। जब वह प्रार्थना करके उठा, उसने पाया वह स्त्री वापस लौट रही है, उसने उसे रोका और कहा कि यह कैसी बदतमीजी है? यह कैसी अशिष्टता है? यह कैसी संस्कार शून्यता है कि देश का बादशाह प्रार्थना कर रहा है और उसको धक्का देते हुए जाया जाए? फिर अगर वह बादशाह न भी हो, तब भी कोई दूसरा मनुष्य भी प्रार्थना कर रहा है, तो उसके पास असंकोच से उसे धक्के देते हुए निकलने की अशिष्टता नहीं होनी चाहिए।
उस युवती ने कहा कि क्या आप रास्ते में प्रार्थना कर रहे थे? मुझे कुछ पता नहीं, मैं अपने प्रेमी से मिलने जा रही थी। मुझे कुछ पता नहीं कि रास्ते में कौन था और कौन नहीं था, मुझे कोई दिखाई नहीं पड़ा, मैंने आपको नहीं देखा। लेकिन उस युवती ने कहाः मुझे हैरानी होती है, आप प्रभु की प्रार्थना कर रहे थे और आपको मेरे धक्के का पता चल गया? अगर वह प्रभु की प्रार्थना थी? और अगर ध्यान प्रभु की ओर था तो मेरे धक्के का बोध नहीं होना चाहिए। मैं तो अपने प्रेमी के पीछे पागल थी, तोमुझे आपका कोई पता नहीं चला। क्या आप इतने भी पागल परमात्मा के लिए नहीं थे? मेरी प्यास तो अपने प्रेमी की तरफ थी, इसलिए मुझे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा, लेकिन आपकी प्यास क्या परमात्मा की ओर इतनी गहरी नहीं थी कि आपको मेरे होने का, मेरे निकलने का बोध न होता?

निश्चित ही अगर बोध हमारा एक ओर हो तो दूसरी ओर से बोध विलीन हो जाता है। और यदि प्रार्थना में कुछ और भी अनुभव हो रहा है तो जानना चाहिए कि वह प्रार्थना झूठी है। बोध जिस ओर जाता है, केवल उसी ओर की सत्ता को प्रकट कर देता है। शेष सारी सत्ता शून्य हो जाती है। हमारा बोध भीतर की ओर नहीं है, इसलिए आत्मा हमें प्रतीत होती है कि नहीं है और संसार प्रतीत होता है कि है। यदि बोध भीतर की ओर जाए तो हमें दूसरा सत्य ज्ञात होगा कि संसार नहीं है और आत्मा है। अगर बोध दोनों ओर संयुक्त हो जाए तो हमें ज्ञात होगा, संसार की भी सत्ता है और आत्मा की भी सत्ता है। जीवन में केवल वही अनुभव होता है, जिस ओर हमारा बोध प्रविष्ट हो जाता है। वह बोध कैसे विकसित हो? उसका ही हम विचार कर रहे हैं।
मैंने पहली बात कही, प्यास चाहिए। मैं समझता हूं वह आप समझे होंगे। लेकिन अकेली प्यास हो तो भी काफी नहीं है, क्योंकि प्यास गलत रास्तों पर भी ले जा सकती है। जरूरी नहीं है कि प्यास आपको सरोवर की तरफ ही ले जाए। यह भी हो सकता है कि प्यास आपको सरोवर के विपरीत ले जाए। क्योंकि प्यास अकेली मार्गदर्शक नहीं है। बहुत लोगों को तो प्यास ही नहीं होती। फिर जिनको प्यास होती है उनमें से बहुत से लोग, प्यास के कारण गलत रास्तों पर भी चले जाते हैं। प्यास हो और ठीक रास्ता हो तो ही जीवन में कुछ उपलब्ध होता है। तो दूसरे चरण में मैं मार्ग पर विचार करना चाहता हूं।
प्यास हो लेकिन मार्ग क्या है, जिसके माध्यम से प्यास की तृप्ति हो सके। साधारणतः हमारी प्यास हमें गलत ले जाती है। सारी दुनिया में प्यास लोगों को गलत रास्तों पर ले गई है। जब कोई मनुष्य परमात्मा के लिए प्यासा होता है तो हम पाते हैं उसने मंदिर जाना शुरू कर दिया है, या मस्जिद जाना शुरू कर दिया, या चर्च जाना शुरू कर दिया। हम देखते हैं, एक आदमी परमात्मा में उत्सुक हुआ है तो वह मंदिरों, मस्जिदों, चर्चों में उत्सुक हो जाता है। लेकिन मनुष्य का इतिहास बताता है कि मंदिर और चर्चों और मस्जिदों में जाने वाले लोग परमात्मा को तोशायद ही उपलब्ध हुए हैं, मनुष्य को खंडित करने में, मनुष्य को नुकसान पहुंचाने में, मनुष्यता को तोड़ देने में जरूर उपयोगी हुए हैं। अगर हम मनुष्य के इतिहास को देखें तो यह ज्ञात होगा कि जितने ये आस्तिक हैं, जितने ये धर्मों को मानने वाले लोग हैं, इनके नाम पर इतना पाप है, इतनी हत्याएं हैं, इतना हिंसा है जिसका कोई हिसाब नहीं। नास्तिकों के नाम पर इतने पाप नहीं हैं, दुनिया में नास्तिकों ने कोई बहुत बुराई नहीं की है, कोई नुकसान नहीं पहुंचाया है, मनुष्यता के लिए, लेकिन आस्तिकों ने पहुंचाया है। और उनके पहुंचाने वालों के अड्डे मंदिर, मस्जिद और चर्च हैं। और इन अड्डों ने मनुष्य को तोड़ा है। और जो चीज मनुष्य को मनुष्य से तोड़ देती हो, वह चीज मनुष्य को परमात्मा से कैसे जोड़ सकेगी? जो मुझे अपने पड़ोसी से तोड़ देती हो, वह मुझे परमात्मा तक ले जाने में कैसे समर्थ हो सकती है? लेकिन जो लोग धर्म में उत्सुक होंगे, उनकी उत्सुकता बहुत शीघ्र ही मंदिर और मस्जिद की उत्सुकता में बदल जाती है। यह प्यास ने गलत रास्ता ले लिया।
स्मरण रखें, मंदिर और मस्जिद भी बाहर हैं; जैसे दुकान बाहर है और मकान बाहर है वैसे ही मंदिर और मंस्जिद भी बाहर हैं। और जो बाहर की तरफ परमात्मा को खोजने जा रहा है उसका बोध भीतर की तरफ नहीं आएगा।
नानक मुसलमानों के तीर्थ मक्का में मेहमान थे। वे रात जब वहां सोए, तो उन्होंने पैर काबा के पवित्र पत्थर की तरफ कर लिए। पुजारी ने आकर कहा कि ये पैर पवित्र पत्थर की तरफ हैं, परमात्मा की तरफ हैं, इन्हें किसी ओर तरफ करके सो जाओ। नानक ने कहाः तुम मेरे पैर उस तरफ कर दो जहां परमात्मा न हो। नानक ने बहुत अदभुत बात कही। उन्होंने कहाः तुम मेरे पैर उस तरफ कर दो जहां परमात्मा न हो। जिसकी दृष्टि मंदिर में है उसे यह ख्याल पैदा हो जाता है कि भगवान मंदिर में हैं, और शेष जगत में क्या है? जिसकी दृष्टि मस्जिद में होती है, उसका ख्याल होता है भगवान मस्जिद में है, और शेष जगत में क्या है?
मंदिर और मस्जिद को मानने वाला भगवान को तो उपलब्ध नहीं होता लेकिन भगवान के एक अत्यंत एकांगी धारणा को, भगवान के अत्यंत खंडित रूप को, भगवान

के अत्यंत काराग्रह और बंधन में बंद रूप को उपलब्ध हो जाता है। और तब परिणाम यह होते हैं--उसके जीवन में धर्म तो नहीं आता, उसके जीवन में संप्रदाय आता है। उसके जीवन में कोई साधुता तो नहीं आती, उसके जीवन में क्रूरता आती है। उसके जीवन में प्रेम तो नहीं आता, लेकिन विद्वेष आता है, संगठन आता है, घृणा आती है। सारे दुनिया के धर्म इसी कारण संगठित हैं घृणा के कारण, दूसरे धर्मों में विरोध में, मंदिर, मस्जिद के विरोध में हैं; मस्जिद, मंदिर के विरोध में है और जो चीज भी किसी के विरोध में है, स्मरण रखें कि वह परमात्मा के पक्ष में नहीं हो सकती। क्योंकि परमात्मा तो समग्र का नाम है। उस समग्र में अगर किसी का भी विरोध है, अंततः वह परमात्मा का विरोध होगा। इसलिए कोई व्यक्ति अगर ईश्वर को खोजने चला है, तो कोई मंदिर और कोई मस्जिद उसे परमात्मा को नहीं दे सकेंगे। उसे तो समग्र जीवन को ही जानने में प्रवेश पाना होगा। और उसका द्वार उसके भीतर है उसके बाहर नहीं है।
मैंने एक फकीर के संबंध में सुना है, वह कोई सत्तर वर्ष की उम्र तक निरंतर मंदिर जाता रहा, प्रभु की प्रार्थना में सम्मिलित होता रहा, एक भी दिन नहीं चूका। कोई पैंतालीस वर्षों से उसके गांव के लोगों ने देखा कि वह हमेशा मंदिर गया है। बीमार था, तो भी मंदिर गया है, अस्वस्थ था, तो भी मंदिर गया है; वृद्ध हो गया तो भी मंदिर गया है, एक भी दिन कभी चूका नहीं। सत्तरवें वर्ष पर एक दिन लोगों ने पाया कि आज वह मंदिर नहीं आया है, तो वे बहुत हैरान हुए। सिवाय इसके कि वह मर गया हो और कोई भी कारण नहीं हो सकता था। सारे लोग उस साधु के झोपड़े की तरफ गए। उन्होंने जाकर देखा, वह तो अपनी खंजरी लिए हुए एक दरख्त के नीचे बैठ कर खंजरी बजा रहा है, वह तो गीत गा रहा है। उन्हें आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा कि इस बुढ़ापे में तुम्हें यह नास्तिकता सूझी है! जीवन भर का उपक्रम, जीवन भर की साधना मंदिर जाने की समाप्त हो गई क्या?
उस बूढ़े साधु ने कहाः जब तक मुझे भगवान के मंदिर का पता नहीं था, तब तक मैं तुम्हारे मंदिर में आता रहा। अब मुझे भगवान के मंदिर का पता है। इसलिए अब किसी मंदिर में जाने की मुझे कोई जरूरत नहीं रह गई है। उन्होंने पूछा भगवान का मंदिर क्या है? उस साधु ने कहाः यह जो सारी प्रकृति है, यह जो सारी सृष्टि है, यदि कोई भगवान का मंदिर है, तो यही है। इसके अतिरिक्त और कोई मंदिर नहीं हो सकता है। और अगर भगवान के मंदिर में जाने का कोई द्वार है, तो वह मेरे भीतर है, वह द्वार कहीं बाहर नहीं हो सकता है। इस विश्वसत्ता के निकट हम अपने ही भीतर से निकटतम हैं, और अगर हमें उस सत्ता से संबंधित होना है तो द्वार हमारे भीतर होगा। इसलिए मैंने कहा कि प्यास अगर पैदा भी हो तो अक्सर प्यास गलत रास्तों पर चली जाती है और वैसे गलत रास्तों पर गई प्यास का ही परिणाम है कि दुनिया में इतने धर्म हैं, अन्यथा एक ही धर्म होना चाहिए। धर्म इतने कैसे हो सकते हैं?
सत्य तो एक ही हो सकता है, असत्य बहुत हो सकते हैं। ये इतने धर्म इस बात की सूचना हैं कि धर्म अपनी परिपूर्णता में, अपने परिपूर्ण सत्य में उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। अपने परिपूर्ण विकास को प्राप्त नहीं कर पा रहा है। अगर लोगों की प्यास गलत न जाए तो दुनिया में संगठन विसर्जित हो जाएंगे, मंदिर और मस्जिद विलीन हो जाएंगे, पादरी और पुरोहित, पंडित और उस तरह के लोग जिन्होंने कि शोषण का व्यापार कर रखा है, मनुष्य की प्यास का, वे सब विलीन हो जाएं। मनुष्य की प्यास का, मनुष्य की आंतरिक अभीप्सा का शोषण चल रहा है, कोई पांच हजार वर्षों से। और उस शोषण के नाम पर न मालूम क्या-क्या हुआ है? अब यह वक्त है कि यह शोषण बंद हो जाना चाहिए। लेकिन यह तभी बंद होगा, जब हमारी प्यास ठीक रुख इख्तियार करे। अगर हमारी प्यास गलत रास्तों पर जाती है तो यह आगे भी होता रहने वाला है। और इस सारे शोषण की बुनियाद, हमारे प्यास को गलत ले जाने का रास्ता है विश्वास।
हमसे कहा गया है, हम विश्वास करें। तीन-चार हजार वर्षों से यह बात दोहराई गई है कि हमें विश्वास करना चाहिए। और गीता पर, कुरान पर, बाइबिल पर, महावीर पर, बुद्ध पर, कृष्ण पर, क्राइस्ट पर विश्वास करना चाहिए। हमें खुद विवेक करने की कोई जरूरत नहीं है, हमें दूसरे लोगों को स्वीकार कर

लेना चाहिए। यह बहुत आत्मघाती बात है। और जिस मनुष्य को सत्य को खोजना हो, उसका रास्ता विश्वास का रास्ता नहीं हो सकता है। विश्वास का रास्ता तो अज्ञान का और अंधकार का रास्ता है। और जो भी विश्वास कर लेता है, वह अपनी गति को अपने हाथ से कुंठित कर लेता है, वह अपने पैरों को अपने हाथ से काट लेता है। आपने कभी किसी विश्वास करने वाले व्यक्ति को सत्य को उपलब्ध होते देखा है? आज तक यह नहीं हुआ। और यह आगे भी नहीं हो सकता है। विश्वास कोई रास्ता ही नहीं है। विश्वास के ही दुष्परिणाम हुए हैं। विश्वास का दुष्परिणाम यह हुआ है कि हमें बिना ज्ञान के ज्ञानी होने का भ्रम और दंभ पैदा हो जाता है।
हममें से अधिक लोग आत्मा को मानते होंगे, अधिक लोग ईश्वर को मानते होंगे, अगर मैं आपसे पूछूं यह मान्यता आपके ज्ञान पर खड़ी है, या आपके अज्ञान पर खड़ी है? या आपने जाना है, या स्वीकार कर लिया है? यह दूसरे लोगों ने आपसे कहा है कि आपकी अपनी अनुभूति से निष्पन्न हुआ है। अगर यह दूसरों की कही हुई बात है, चाहे वे मां-बाप हों, चाहे पुरानी पीढ़ी हो, चाहे बहुत बड़े-बड़े महापुरुष हों, अगर यह दूसरों की कही हुई यह बात है तो स्मरण रखिए, दूसरे की आंखों से न कोई देख सकता है, और न दूसरों के पैरों से कोई चल सकता है तो दूसरों का ज्ञान आपका ज्ञान कैसे हो सकेगा? दूसरों का ज्ञान आपको ज्ञान होने का भ्रम दे देगा और आप अज्ञान में ही खड़े रह जाएंगे। जो मनुष्य भी विश्वास कर लेगा, वह जीवन को अज्ञान में समाप्त कर लेता है। विश्वास से कोई कभी, बिलीफ से दूसरे पर आस्था कर लेने से कोई कभी कहीं नहीं पहुंच सकता है। और इसके घातक परिणाम हुए हैं, उन्नीस सौ सत्रह में रूस में क्रांति हुई। क्रांति के पहले वह मुल्क धार्मिक मुल्क था। जैसे हम धार्मिक हैं, ऐसा ही वह भी धार्मिक था। वहां भी चर्च थे और मंदिर थे और मस्जिदें थीं, और वहां के लोग पूजा करते थे, और प्रार्थना करते थे, और वहां के लोग भी कुरान और बाइबिल को पढ़ते थे।
उन्नीस सौ सत्रह में क्रांति हुई, बीस-पच्चीस वर्षों तक निरंतर वहां
की हुकूमत ने यह प्रचार किया कि न कोई ईश्वर है, न कोई आत्मा है, न कोई परलोक है, न कोई कर्म है, न कोई पुनर्जन्म है। बीस वर्षों के प्रचार से बीस करोड़ लोगों ने मान लिया कि कोई ईश्वर नहीं है, कोई आत्मा नहीं है, कोई परमात्मा नहीं है। आप कहेंगे बड़े पागल लोग हैं? लेकिन मैं आपको कहूं वे पागल लोग नहीं हैं। उनको विश्वास की आदत दिलाई गई थी, पांच हजार वर्षों से उन्हें समझाया गया था कि विश्वास करो, विश्वास की उनकी आदत थी, उन्हें नया प्रचार किया गया, उन्होंने उस पर भी विश्वास कर लिया। अगर इस मुल्क में कम्युनिज्म आएगा, इस मुल्क के ये सारे मंदिर जाने वाले लोग, ये ही मंदिर जाने वाले लोग मंदिर के विरोध में खड़े हो जाएंगे। ये ही मूर्ति को पूजने वाले लोग मूर्ति को तोड़ने वाले बन जाएंगे। क्योंकि इनकी आदत विश्वास करने की है, जो भी इनसे कहा जाए, उसको ये विश्वास कर लेंगे। अभी ये ईश्वर पर विश्वास करते हैं, कल ये ईश्वर के न होने पर विश्वास कर लेंगे, इनकी आदत विश्वास की है। इन्हें कुछ भी विश्वास कराया जा सकता है।
कोई भी झूठ, कितना ही बड़ा झूठ, अगर प्रचारित किया जाए तो ये लोग विश्वास कर लेंगे। आपके लिए ईश्वर सत्य है? आप एक बड़े झूठ पर विश्वास किए हुए हैं। आपके लिए तोझूठ है, जिन्होंने जाना होगा, उनके लिए सत्य होगा। लेकिन आप विश्वास किए हुए हैं कि ईश्वर है। और आपको उसका कोई भी पता नहीं। और आप विश्वास किए हुए हैं कि आत्मा है। और आपको आत्मा का कोई भी पता नहीं। और आप विश्वास किए हुए हैं कि अगला जन्म है और आपको अगले जन्म का कोई भी पता नहीं। आप बड़ी से बड़ी झूठों पर विश्वास किए हुए हैं, और जो मस्तिष्क झूठ पर विश्वास करता है, वह सत्य को कैसे पा सकेगा? अगर कल आपको दूसरी झूठें कही गईं, आप उन पर भी विश्वास कर लेंगे।
जर्मनी में हिटलर ने बहुत सी झूठें प्रचारित की। उसने अपनी आत्मकथा में लिखा कि कितनी ही बड़ी झूठ हो, अगर बार-बार प्रचारित की जाए, लोग उसे मान ही लेते हैं। और यह सच है। हिटलर ने लोगों को समझाया कि जर्मनी का सारा पतन यहूदियों के कारण हुआ है। सारा पाप यहूदियों के सिर पर है। जर्मनी हारता है तो यहूदियों के पाप के कारण हारता है। उसके मित्रों ने भी उससे कहा, यह

क्या पागलपन की बात है? यह बिल्कुल असत्य है। इसमें कोई तुक, कोई संगति नहीं है। लेकिन हिटलर ने कहाः फिकर मत करो, प्रचार करने से असत्य सत्य हो जाता है। और उसने पांच-सात वर्षों तक प्रचार किया, और सारा मुल्क, शिक्षित मुल्क राजी हो गया इस बात को मानने को कि यहूदियों के ऊपर सारा पाप है। और इनकी हत्या करने से ही मुल्क का विकास होगा। सारी दुनिया में इस तरह के प्रचार हैं। और इसके पीछे कारण हैं, हममें विश्वास का जो आधार बिठाया गया है कि हम मान लें।
मैं चाहता हूं कि धर्म का संबंध विश्वास से टूट जाना चाहिए। अगर आपकी प्यास को सम्यक मार्ग लेना है तो वह विश्वास का मार्ग नहीं होगा, वह विवेक का मार्ग होगा। जो भी विश्वास कर लेता है... सच पूछिए, हम क्यों विश्वास कर लेते हैं? हमारे भीतर काहिलपन है, सुस्ती है, श्रम करने का अभाव है। हम मान लेते हैं कि दूसरा जो कहता है, ठीक कहता होगा।
सच यह है कि विश्वास करने का अर्थ ही यह हुआ कि हमारे भीतर खुद जानने
की बहुत गहरी इच्छा नहीं है। इसलिए हम दूसरे के कंधे पर हाथ रख कर स्वीकार कर लेते हैं कि तुम हमें मार्ग दिखाओ। लेकिन यह क्या कभी संभव है? क्या यह संभव है कि दूसरे की बात विश्वास कर लेने से हमारे भीतर का अज्ञान मिट जाए? हम कितने ही गहरे मन से विश्वास करें, कितना ही दृढ़ विश्वास करें, हमारा अज्ञान कैसे मिटेगा? क्या आप सोच सकते हैं, आपको ईश्वर का कोई पता नहीं है? आप विश्वास कर लें कि ईश्वर है, बहुत गहरा विश्वास कर लें, सारे प्राणों से विश्वास कर लें तो भी आपके भीतर किसी आंतरिक बिंदु पर आपको ज्ञात रहेगा कि मुझे ईश्वर का कोई भी पता नहीं है। आप कितना ही विश्वास कर लें, भीतर संदेह मौजूद रहेगा, वह नष्ट नहीं हो सकता है। विश्वास संदेह को नष्ट कभी नहीं कर पाता। नष्ट कैसे करेगा? विश्वास का संदेह से कोई विरोध ही नहीं है। विश्वास तो उसी भांति है, जैसे किसी आदमी को बीमारी हो जाए, और वह कपड़ों से अपने कोढक ले और सोचे कि बीमारी खत्म हो गई। जैसे किसी को बहुत गहरा फोड़ा हो जाए, किसी को कैंसर हो जाए, नासूर हो जाए, वह अच्छे-अच्छे फूलों से उसकोढक ले और सोचे कि मेरी बीमारी खतम हो गई। विश्वास तो ऊपर से ढांक लिया जाता है, लेकिन भीतर की रुग्णता, भीतर का अज्ञान उससे कैसे मिटेगा?
विश्वास तो वस्त्रों की भांति है, वह आपके प्राणों को परिवर्तित नहीं
कर सकता है। प्राणों का परिवर्तन तो विवेक से आएगा, स्वयं के अंतर-विवेक से आएगा, स्वयं की प्रज्ञा जागने से आएगा। इसलिए विश्वास मार्ग नहीं है। लेकिन हमको तो समझाया गया है कि विश्वास मार्ग है। और हमको तो कहा गया है कि जो विश्वासी हैं, वे ही स्वर्ग पहुंच जाएंगे। और जो विश्वास नहीं करते, उनके लिए स्थान नरक होगा। और हमको तो कहा गया है, विश्वास नहीं करोगे तो नष्ट हो जाओगे।
ये बातें बिल्कुल झूठ हैं। ये बातें झूठ हैं और किसी चीज को प्रचारित करने के लिए बार-बार कहीं गई हैं। विश्वास से कहीं कोई कभी नहीं पहुंच सकता। क्योंकि विश्वास संदेह का विरोध नहीं है। विश्वास से संदेह का अंत नहीं होता। हां, संदेह मिट जाए, तो व्यक्ति सत्य को उपलब्ध होता है। और संदेह विश्वास से कभी नहीं मिटता। संदेह मिटता है विवेक से। इसे थोड़ा समझें, संदेह भीतर पैदा होता है और विश्वास बाहर से आते हैं। जो भीतर पैदा होता है, वह बाहर से आई किसी भी चीज से ढांका जा सकता है, मिटाया नहीं जा सकता। संदेह भीतर पैदा होता है, विश्वास बाहर से आते हैं। विवेक भी भीतर पैदा होता है। जहां बीमारी है, वहीं समाधान हो सकता है। विश्वास दूसरे देते हैं, संदेह आपका होता है। विवेक भी आपका होता है, इसलिए विवेक तो संदेह को नष्ट कर सकता है, लेकिन विश्वास नष्ट नहीं कर सकते हैं। और यही कारण है कि इतना विश्वास है दुनिया में, लेकिन फिर भी धार्मिक मनुष्य कहां है? इतने विश्वासी लोग हैं, लेकिन धार्मिकता कहां है?
विश्वास से पैदा हुई धार्मिकता बिल्कुल झूठी होगी और न केवल झूठी होगी बल्कि मनुष्य को एक गहरे पाखंड में भी ले जाने का कारण बन जाती है। जो व्यक्ति भी किसी दूसरे पर विश्वास करता है, विश्वास के कारण उस तरह का आचरण करने के प्रयोग करने लगता है। आचरण उसका थोपा हुआ होता है, हर आदमी इस

भांति दो खंडों में टूट जाता है, एक उसकी अपनी असलियत होती है और एक उसका विश्वास से लादा हुआ आचरण होता है। इन दोनों मनुष्यों के भीतर बड़ी कलह शुरू हो जाती है। ये दोनों हिस्से आपस में लड़ने लगते हैं। आप अपने भीतर देखें तो आपको पता चलेगा, आपका विश्वास और आपका व्यक्तित्व दोनों निरंतर लड़ रहे हैं। आपका विश्वास होगा अहिंसा सत्य है, आपका व्यक्तित्व कहेगा हिंसा सत्य है। आपका विश्वास है सत्य बोलना ठीक है, आपका व्यक्तित्व कहता है असत्य बोलना ठीक है। आपका विश्वास कहता है ब्रह्मचर्य ठीक है, आपका व्यक्तित्व कहता है कि सेक्स ठीक है। आपके भीतर निरंतर कलह है। और जो मस्तिष्क बहुत कलह में होता है, वह मस्तिष्क धीरे-धीरे जड़ हो जाता है। उसकी चेतना और उसकी चैतन्य की शक्ति कम हो जाती है। और जिसकी चैतन्य की शक्ति कम हो जाए, वह ईश्वर को या सत्य को वह कैसे जान सकेगा?
विश्वास आपको कलह में डालते हैं और यही कारण है, जितनी सभ्यता विकसित होती जाती है, उतनी मानसिक कलह बढ़ती जाती है। क्योंकि विश्वास खूब प्रचारित करने के उपाय हमारे पास हो गए हैं, विश्वास को खूब प्रचारित किया जा सकता है, लोगों के मनों में डाला जा सकता है, विश्वास वहां पहुंच जाएगा, उनका व्यक्तित्व जैसा था वैसा ही बना रहेगा। परिणाम यह होगा कि वे एक आंतरिक कलह में, एक इनर कांफ्लिक्ट में पड़ जाएंगे, अपने भीतर लड़ना शुरू कर देंगे। और जो अपने भीतर चौबीस घंटे लड़ता है, या तो विक्षिप्त हो जाएगा और या पाखंडी हो जाएगा। पाखंडी का अर्थ है कि वह कहेगा कुछ, करेगा कुछ। और अगर ईमानदार हुआ तो पागल हो जाएगा। क्योंकि इन दोनों के बीच कोई संगति नहीं बैठ सकेगी। तनाव तीव्र होगा, अंततः तनाव तोड़ देगा। जितना मनुष्य सभ्य होता जा रहा है, उतना ही उसके भीतर तनाव गहरा होता जा रहा है। और तनाव का कारण क्या है? विश्वास और व्यक्तित्व के बीच में विरोध है।
इसलिए अगर आपके मुल्क में विक्षिप्त लोग बढ़ते चले जाएं, मानसिक रूप
से विकार ग्रस्त लोग बढ़ते चले जाएं तो आप समझना आप सभ्य हो रहे हैं। और जिस दिन आपकी कौम बिल्कुल पागल हो जाए, सब मस्तिष्क खराब हो जाएं, समझना आप सभ्यता की परिपूर्णता पर पहुंच गए, सिविलाइजेशन पूरी हो गई। क्योंकि यही परिणाम हो सकता है। और अगर यह परिणाम न होगा तो दूसरा परिणाम यह होगा कि आप सब के सब पाखंड में प्रविष्ट हो जाएंगे, आप कहेंगे कुछ, करेंगे कुछ। आप चाहेंगे कुछ, समझाएंगे कुछ। आपका उपदेश अलग होगा, आपका जीवन अलग होगा, आपके विचार अलग होंगे, आपका व्यक्तित्व अलग होगा। यह तो वैसे हुआ जैसे कोई एक आदमी, दो नाव पर एक साथ सवार हो जाए और दोनों नाव अलग-अलग दिशाओं में यात्रा शुरू कर दें, उसके प्राण संकट में पड़ जाएंगे। वैसे ही प्राण हम सबके संकट में पड़े हुए हैं। इसलिए मैं कहता हूं विश्वास मार्ग नहीं है। लेकिन इसका क्या यह अर्थ है कि मैं कहूं कि अविश्वास मार्ग है? अविश्वास भी मार्ग नहीं है। क्योंकि अविश्वास भी विश्वास का ही एक रूपांतर है। एक आदमी कहता है, मैं ईश्वर में विश्वास करता हूं। दूसरा आदमी कहता है, मैं ईश्वर में अविश्वास करता हूं। लेकिन दोनों ही घोषणाएं अज्ञान से भरी हुई हैं। आस्तिक भी गलत है, और नास्तिक भी गलत है। असल में आस्तिक का ही प्रतिरोध, आस्तिक का ही रिऐक्शन नास्तिक है। विश्वास और अविश्वास का तल हमेशा एक ही होता है।
इसलिए जब मैं यह कह रहा हूं कि विश्वास गलत है और सत्य के खोज का वास्तविक मार्ग नहीं है तो कोई यह न समझ ले कि मैं यह कह रहा हूं कि अविश्वास ठीक है। अविश्वास भी गलत है। मेरे देखे आस्तिक और नास्तिक दोनों ही सत्य के मार्ग पर नहीं होते हैं। क्योंकि दोनों ही बिना जाने कुछ बातों को स्वीकार कर लेते हैं। दोनों ही बिना जानें कुछ मान्यताओं को अंगीकार कर लेते हैं। सत्य के मार्ग पर तो वह होता है, जिसका न कोई विश्वास है और न कोई अविश्वास है, जिसका मस्तिष्क खुला हुआ है।
विश्वास भी मस्तिष्क को बंद कर देता है, क्लोज कर देता है; अविश्वास
भी मस्तिष्क को बंद कर देता है। उसके द्वार बंद हो जाते हैं, जानने की क्षमता क्षीण हो जाती है, वह अपने विश्वास या अविश्वास में घिर कर बंद हो जाता है। और इन दोनों के परिणाम हुए हैं। नास्तिकों का परिणाम यह हुआ है कि लोग यह समझने लगे कि ईश्वर है ही नहीं, आत्मा है ही नहीं, इसलिए खोजने का

क्या प्रयोजन है? एक बहुत बड़ी दिशा, नास्तिक का विश्वास बंद कर देता है।
एक बहुत बड़ा आयाम, एक बहुत बड़ा डाइमेन्शन, जहां कि जीवन बहुत ऊपर उठ सकता था, जहां कि जीवन नई-नई अनुभूतियां और नये-नये सौंदर्य और आनंद को अनुभव कर सकता था, नास्तिक का द्वार उसे बंद कर देता है।
नास्तिक कह देता है यह कुछ है ही नहीं। बिना जाने, बिना प्रयोग किए। बिना उस जगत में प्रवेश किए, नास्तिक कह देता है, यह कुछ है ही नहीं। सारी दुनिया में जो लोग नास्तिकों से प्रभावित होंगे, उनका जीवन शरीर के तल पर समाप्त हो जाएगा। जो नास्तिकता के विश्वास को पकड़ लेंगे, उनका जीवन शरीर के तल पर समाप्त हो जाएगा। क्योंकि नास्तिक उसके ऊपर किसी जीवन का निषेध कर देता है, इनकार कर देता है। और अगर नास्तिकता प्रचारित की जाए तो आपके दिमाग उसे स्वीकार कर लेंगे। अभी दुनिया में नास्तिकता तीव्रता से प्रचार पर है। आस्तिक घबड़ाए हुए हैं, क्योंकि उनके विश्वास छिन रहे हैं, नास्तिकता जोर से प्रचार पर है, संभव है कि सौ, दो सौ वर्षों में दुनिया का बहुत बड़ा हिस्सा नास्तिक होगा। वह बड़े खतरे की बात होगी। खतरे की बात इसलिए होगी कि लोगों के जीवन में उठने का मार्ग ही विलीन हो जाएगा। अगर यह ख्याल पैदा हो जाए कि ऊपर कुछ मार्ग है ही नहीं तो उठने की आकांक्षा अपने आप शून्य हो जाती है। और तब हम एक नीचे के तल पर जीना शुरू कर देते हैं। नास्तिक के विश्वास का खतरा है कि वह परमात्मा की तरफ उठने के द्वार बंद ही कर देता है।
आस्तिक के विश्वास का खतरा है कि वह परमात्मा के नाम से कुछ कल्पनाएं प्रचलित कर देता है और जो लोग उनमें उत्सुक हो जाते हैं, वे भी परमात्मा से वंचित हो जाते हैं, और परमात्मा की जगह परमात्मा के स्वप्न देखने लगते हैं। कोई राम का स्वप्न देख रहा है, कोई कृष्ण का स्वप्न देख रहा है, कोई क्राइस्ट का, यह कोई भी परमात्मा का अनुभव नहीं है। ये हमारी कल्पनाएं हैं। और अगर हम कल्पनाओं को तीव्रता से करें तो उनके अनुभव भी हो सकते हैं। दुनिया में जिनको भी राम के दर्शन हुए हों, या कृष्ण के दर्शन हुए हों, या क्राइस्ट के, या बुद्ध के, या महावीर के, जानना होगा कि वे अपनी ही किसी कल्पना का अनुभव कर रहे हैं। मनुष्य के मन में स्वप्न देखने की बड़ी क्षमता है, बहुत क्षमता है इमेजिनेशन की, बहुत कल्पना करने की क्षमता है। इतने दूर तक कल्पना की जा सकती है कि दूसरा व्यक्ति बिल्कुल साक्षात दिखाई पड़ने लगे। आखिर पागल क्या करते हैं? पागल यही करते हैं, उनकी कल्पना की क्षमता तीव्र हो जाती है, उनका विवेक शून्य हो जाता है, कल्पना तीव्र हो जाती है, वे जिसको भी देखना चाहें उसे, देख लेते हैं। दुनिया के बड़े साहित्यकार, दुनिया के बड़े कवि, दुनिया के बड़े चित्रकार क्या करते हैं? उनकी भी कल्पना तीव्र हो जाती है, वे लोगों को अनुभव करने लगते हैं। मैंने सुना है, टाल्सटाय हुआ वहां रूस में। उसने... एक उपन्यास लिख रहा था, रिसरेक्शन। उसमें एक महिला पात्रा है। एक सुबह वह एक लाइब्रेरी में, कुछ ग्रंथ खोजने गया, सीढ़ियों पर चढ़ता था, वह भी चल रहा था, उसकी महिला जो पात्रा थी, वह जो उसके उपन्यास में, रिसरेक्शन में एक पात्रा है महिला, वह भी उसके साथ चल रही थी। कोई था नहीं वहां, उसकी कल्पना में वह स्त्री उसके साथ चल रही थी। रास्ता संकरा था, सीढ़ियां छोटी थीं, ऊपर से एक पुरुष नीचे उतर रहा था। वह रास्ता दो के लायक था, तीन के लायक नहीं था। इस स्त्री को धक्का न लग जाए इसलिए टाल्सटाय बचा। सीढ़ियों से नीचे गिर गया और टांग उसकी टूट गई। लोगों ने उससे पूछाः तुम बचे क्यों? दो के लिए तो वहां काफी रास्ता था, उसने कहा तुम्हें दो दिखाई पड़ते थे, मेरे साथ एक तीसरा भी था। वह मेरी एक पात्रा, मेरी एक महिला पात्रा मेरे साथ थी, उससे मैं बातचीत करता हुआ ऊ पर जा रहा था। लोगों ने कहाः यह पागल होगा।
अलेक्जेंडर ड्यूमा के बाबत है कि कई दफा उसके घर के लोगों को पड़ोसियों ने घेर लिया। वह अंदर अपने पात्रों से झगड़ा करने लगता था। वह जो उपन्यास लिखता था, या नाटक लिखता था, उनमें जो पात्र होते थे वे इतने सजीव हो जाते थे कि वह बराबर उनसे बातचीत करते-करते झगड़े में उतर आता था। अकेला ही होता कमरे में, मोहल्ले के लोग इकट्ठे हो आते, दरवाजा खुलवाते वे पाते अकेला खड़ा है, किससे बात कर रहा था? तो वह कहता मेरे उपन्यास के पात्रों से

बात कर रहा था। दुनिया के सारे कवि सारे साहित्यकार अपनी कल्पना में अपने पात्रों का साक्षात्कार कर लेते हैं। दुनिया के सारे विक्षिप्त विकारग्रस्त लोग अपनी कल्पनाओं को साकार कर लेते हैं। न केवल बाहर अपनी कल्पना का साकार हो सकता है, भीतर भी अपनी कल्पना का साकार हो सकता है। अभी हिंदुस्तान की जेलों में जब नेहरू जिंदा थे, तो कोई दस नेहरू बंद थे। कोई दस पागल थे पूरे मुल्क में जो यह घोषणा करते थे कि हम जवाहर लाल नेहरू हैं। जब चर्चिल वहां हुकूमत में था, तो कोई पंद्रह आदमी ब्रिटेन के पागलखानों में बंद थे जो यह कहते थे हम विंस्टीन चर्चिल हैं। और वे कोई झूठ नहीं कहते थे, उन्होंने यह विश्वास किया हुआ था, इसकी पूरी कल्पना कर ली थी।
मैंने सुना, नेहरू एक पागलखाने को देखने गए थे और उसी दिन एक पागल को
उस पागलखाने से छोड़ा गया, वह ठीक हो गया था। उसका इलाज हो गया था, वह मुक्त हो रहा था। तो पागलखाने के अधिकारियों ने कहा कि नेहरू खुद अपने हाथों से उसे छुटकारा दे दें, वह बहुत खुश होगा। उसे छुटकारा नेहरू ने दिया, जब नेहरू से उसका परिचय कराया गया, तो पागल खाने के अधिकारियों ने कहा कि ये हैं पंडित जवाहरलाल नेहरू। तो उस पागल ने गौर से उनकी तरफ देखा, और उसने कहाः अच्छा घबड़ाइए मत, आप भी साल-दो साल में ठीक हो जाएंगे। पहले मुझे भी यही वहम था कि मैं पंडित जवाहरलाल नेहरू हूं। अगर इस स्थान में आप रहे तो आप वर्ष-दो वर्ष में बिल्कुल ठीक हो जाएंगे। नेहरू बहुत घबड़ा गए होंगे कि यह क्या कह रहा है? लेकिन वह ठीक ही कह रहा था, वह जब आया था तो नेहरू था, ठीक होकर वापस लौट रहा है।
यह पागलों को क्या होता है? और आप सोचते हैं कि जो आदमी निरंतर कह रहा
है कि मैं ब्रह्म हूं, मैं बह्म हूं, इसको अगर निरंतर दोहराता रहे, उपवास करे और दोहराए, तो धीरे-धीरे उसे यह वहम होने लगता है कि मैं ब्रह्म हूं। वह घोषणा करने लगता है कि मैं ब्रह्म हूं, मैं परमात्मा हूं। अभी दुनिया में तीन सौ लोग हैं जो यह घोषणा करते हैं कि हम ईश्वर हैं। हम ईश्वर के अवतार हैं। इनका दिमाग थोड़ा सा कहीं कुछ गड़बड़ है। इनके मस्तिष्क में किसी विश्वास को बहुत गहरे रूप से प्रक्षेपित कर लिया, प्रोजेक्ट कर लिया। ये किसी बात को विश्वास करके बैठ गए।
वहां उमर खलीफा हुआ, मुसलमान तो पसंद नहीं करते कि कोई आदमी यह कहे कि मैं ईश्वर हूं। एक आदमी ने घोषणा कर दी कि मैं ईश्वर का पैगंबर हूं। वह जरूर पागल था, उसने घोषणा कर दी कि मैं पैगंबर हूं। मुसलमानों ने कहा कि पैगंबर तो मोहम्मद हो गए, अब कोई पैगंबर नहीं होना है। उसे पकड़ के लाया गया, खलीफा उमर के दरबार में। उमर ने कहा यह पागलपन छोड़ो, ऐसे और भी पैगंबर मैंने कैद कर रखे हैं, पर वह बोला कि पागलपन? मुझे खुद परमात्मा ने भेजा हुआ है। और मुझे कहा है कि दुनिया को जाकर अपना संदेश दो। वह आदमी बंद कर दिया गया। दूसरे दिन उमर उससे मिलने गया, पागलखाने में कि शायद वह राजी हो जाए, छूटने को, तो मैं उसे छोड़ दूं। जब वह वहां गया तो उसे एक कमरे की दहलान के बाहर दो लोग बैठे हुए थे, एक आदमी दीवाल की तरफ मुंह किए बैठा था, और वह आदमी जो पैगंबर कहता था, सीढ़ियों पर बैठा था। उमर ने उससे कहा कि देखो तुम्हारा दिमाग., दुरुस्त कर लो, यह पागलपन छोड़ दो, तो मैं तुम्हें छोड़ सकता हूं, अन्यथा व्यर्थ ही जीवन तुम्हारा कैद में नष्ट हो जाएगा।
उस आदमी ने हंस कर कहा कि आप कैसी फिजूल बातें कर रहे हैं, मुझे खुद परमात्मा ने भेजा हुआ है, मैं ईश्वर का पैगंबर हूं, उसका संदेश लेकर आया हूं। और पैगंबरों पर तकलीफें तो हमेशा आती रही हैं। इतनी बात ही हुई थी कि वह जो आदमी दीवाल की तरफ मुंह किए हुए बैठा था, उसने मुंह इस तरफ किया और उसने खलीफा उमर से कहा कि उमर इसकी बातों पर विश्वास नहीं करना, मैं खुद परमात्मा हूं, मैंने इसे कभी भेजा ही नहीं। मोहम्मद के बाद मैंने किसी को भेजा ही नहीं है। वह दूसरा पागल था, जो अपने को ईश्वर ही मानता था।
पागलों के मन की क्षमता है कि वे कोई भी चीज पर गहरा विश्वास कर लें। असल में विश्वास पागलपन का ही एक रूप है। फिर चाहे वह खुद पर आरोपित हो, चाहे दूसरे पर आरोपित हो। जिन लोगों को राम के, कृष्ण के या क्राइस्ट के दर्शन होते हैं, ये इमेजिनरी लोग हैं, इन्हें किसी सत्य का अनुभव नहीं हो

रहा है। ये किसी बड़ी गहरी कल्पना में प्रविष्ट हो गए हैं। और कल्पना में प्रविष्ट होने के कई उपाय हैं। अगर बहुत लंबा उपवास किया जाए, बुद्धि की क्षमता क्षीण हो जाती है, इसलिए सारे साधक जो कल्पना में अनुभव करना चाहते हैं, उपवास को अनिवार्य बताएंगे। जितना उपवास गहरा होगा, बुद्धि की जो सतेजता है, वह कम हो जाएगी और स्वप्न की शक्ति मुक्त होने लगेगी।
जितना कम भोजन शरीर को मिलेगा, उतना जानने का बोध कम होने लगेगा और कल्पना का बोध गहरा होने लगेगा। इसलिए सारे दुनिया के कल्पनाशील लोग उपवास के समर्थन में खड़े हो रहे हैं। लंबा उपवास बुद्धि को क्षीण करता है। और कल्पना को तीव्र कर देता है। जैसे आपने लंबी बीमारी में अनुभव किया हो, बहुत दिन भोजन न मिला हो, लंबे दिन बीमार रहे हों तो आपको अनेक-अनेक कल्पनाएं पकड़ने लगती हैं। आपका पलंग उड़ा जा रहा है, आप आसमान में चले गए हैं, आप न मालूम क्या हो गए हैं? पंख लग गए हैं, उड़ रहे हैं और आपको ऐसा लगता है, यह सब सच है। जैसे-जैसे बुद्धि की क्षमता क्षीण हो, वैसे-वैसे कल्पना प्रगाढ़ हो जाती है। और अगर इसी कल्पना को बार-बार रिपीट किया जाए, दोहराया जाए तो हिप्नोसिस पैदा हो जाती है, सम्मोहन पैदा हो जाता है। अगर एक आदमी सुबह से सांझ तक यह दोहराता रहे, दोहराता रहे कि मैं बीमार हूं, मैं बिल्कुल बीमार हूं, मैं बिल्कुल बीमार हूं। वह दो-चार दिन में वह पाएगा वह गहरे रूप में बीमार हो गया है। अगर एक बीमार आदमी यह दोहराता रहे कि मैं मर जाऊंगा, फलां दिन मर जाऊंगा, फलां तारीख को मर जाऊंगा, निश्चित फलां तारीख को वह मर जाएगा। आप जो भी दोहराते हैं आपका चित्त उसे स्वीकार करने के लिए राजी हो जाता है। और अगर बहुत दोहराएं तो चित्त राजी हो जाता है।
जो लोग राम को पूजते हों, कृष्ण को या महावीर को, या बुद्ध को और दोहराते हों उनके दर्शन हो जाएं, उनकी मूर्ति के सामने बैठ कर उनकी प्रतिमा को अपने मन में लेते हों, धीरे-धीरे उनकी कल्पना प्रगाढ़ हो सकती है और वह अनुभव कर सकते हैं, वह अनुभव बिल्कुल ही असत्य होगा। वह अनुभव उनकी ही कल्पना का होगा। वह कोई सत्य का या परमात्मा का अनुभव नहीं है। क्योंकि परमात्मा का न कोई रूप है और न परमात्मा की कोई मूर्ति है। वस्तुतः परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है कि आपको उसका साक्षात हो जाए, परमात्मा तो प्रेम जैसा एक अनुभव है, कोई मिलता नहीं है देखने को, लेकिन आपके जीवन की अनुभूति बदल जाती है। आप कुछ और हो जाते हैं, उसकी हम चर्चा करेंगे कि वह सत्य परमात्मा का अनुभव क्या है? लेकिन मैं आपको कहूं विश्वास उसका रास्ता नहीं है। विश्वास तो कल्पना का ही एक रूपांतरण है। विश्वास तो विक्षिप्त होने का ही मार्ग है। और अविश्वास भी उसका रास्ता नहीं है। क्योंकि अविश्वास द्वार ही बंद कर देता है। और विश्वास गलत द्वार दे देता है। चित्त की ऐसी भूमि जहां न कोई विश्वास है, न अविश्वास है, सत्य को जानने में समर्थ होती है। ऐसा चित्त धार्मिक चित्त है जो न आस्तिक है और न नास्तिक है।
नास्तिक भी धार्मिक नहीं है, आस्तिक भी धार्मिक नहीं है। नास्तिक धर्म-विरोधी है, आस्तिक गलत धर्म के पीछे जाने वाला है। आस्तिक और नास्तिक ऐसा जो दोनों नहीं है, ऐसा चित्त धार्मिक चित्त है। ऐसे मस्तिष्क को ही रिलिजियस माइंड, ऐसे मस्तिष्क को ही हम कह सकते हैं कि वह सत्य को जानने में समर्थ हो सकेगा। ऐसा मस्तिष्क ही निर्दोष होता है। न उसका कोई विश्वास होता है, न अविश्वास होता है। वह उन्मुक्त होता है, खुला होता है, जैसा जीवन है, वैसा जानने में समर्थ हो सकता है।
विश्वास करने वाला अपने विश्वास थोपना चाहता है, अविश्वास करने वाला अपना अविश्वास थोपना चाहता है। जैसा जगत है, जैसा सत्य है, वैसा देखने को वे दोनों ही राजी नहीं होते। केवल ऐसा ही मन, दोनों के बाहर जो है, वस्तुतः सत्य जैसा है उसे देखने में समर्थ हो पाता है। सत्य को देखने के लिए आपके पास कोई भी धारणा नहीं होनी चाहिए--न हिंदू होने की, न मुसलमान होने की; न जैन होने की, न बौद्ध होने की; न आस्तिक होने की, न नास्तिक होने की। आपका चित्त बिल्कुल ही धारणा-मुक्त और धारणा-शून्य होना चाहिए। आपका कोई बिलीफ नहीं होना चाहिए। आपकी कोई श्रद्धा नहीं होनी चाहिए। अगर मन इतना मुक्त हो, तो आप समर्थ होंगे, मार्ग खुलेगा। तो मार्ग है--न विश्वास, न अविश्वास,

बल्कि चित्त की स्वतंत्रता--स्वतंत्रता मार्ग है। बंधा हुआ चित्त रुका हुआ चित्त है। जिसने अपने चित्त को कहीं बांध लिया है--चाहे राम से, चाहे कृष्ण से, चाहे गीता से, या कुरान से, वैसा चित्त बंधा हुआ है। और बंधा हुआ चित्त क्या जान पाएगा? रुका हुआ चित्त कहां जा पाएगा? वह उस डबरे की तरह है जिसके चारों तरफ से दीवाल उठा दी गई है। वह डबरा सागर तक नहीं पहुंच सकता। उस डबरे का तो एक ही भाग्य होगा कि तपेगा, सड़ेगा, पानी हवा में उड़ेगा और सूख जाएगा। जो मस्तिष्क बंधा हुआ है धारणाओं से वह छोटे-मोटे गड्ढों में कैद पानी की तरह है और जो मस्तिष्क किसी धारणा से नहीं बंधा हुआ है वह मस्तिष्क सागर की ओर दौड़ती हुई नदी की भांति है। नदी के भी किनारे होते हैं, लेकिन नदी किनारों से बंधी नहीं होती।
एक किनारा विश्वास का है, एक किनारा अविश्वास का है, जिसका चित्त दोनों किनारों से नहीं बंधता और दोनों के बीच से पार निकल जाता है, वही केवल सागर तक पहुंचने में समर्थ हो पाता है। एक आस्तिक का किनारा है, एक नास्तिक का किनारा है, इन किनारों पर जिसने अपनी नौका बांध दी वह वहीं रुक जाएगा। और जिसने दोनों किनारों पर अपनी नौका नहीं बांधी और बीच में जो धार है जीवन की बीच में जो धार है चेतना की, बीच में जो धार है, ज्ञान की उस धार में बहा, बिना कहीं रुके, तो निश्चित ही वह सागर तक पहुंच जाएगा। जैसे हिमालय से गंगा निकलती है और भागती है सागर की तरफ, वैसे ही चित्त को अपनी सारी कैद से निकल कर और सत्य की ओर जाना चाहिए तो ही हम पहुंच सकेंगे, और अगर हम कहीं रुक गए, तो हम डबरे हो जाएंगे। अधिक मस्तिष्क डबरों की भांति हो गए हैं, उनके भीतर का पानी सड़ गया है, और निरंतर जीवन से उत्ताप पाकर वह पानी उड़ा जा रहा है, वे सूखते जा रहे हैं। यह सूखता जाना ही बूढ़ा हो जाना है। और बहते जाना ही युवा होना है। जो मस्तिष्क युवा है वही सत्य को जान सकता है। जो मस्तिष्क बूढ़ा हो गया है और जिसने दीवालें बांध ली हैं, वह सत्य को नहीं जान सकेगा। असल में सत्य को जानने के लिए स्वतंत्रता अपरिहार्य है। सब भांति की स्वतंत्रता और यह स्वतंत्रताएं बहुत बड़ी नहीं हैं कि आप जेल के भीतर नहीं हैं कि आपके हाथ में जंजीरे नहीं हैं।
मेरे एक मित्र थे, मुझे प्रेम करने वाले साधु थे। उन्होंने मुझे एक संस्मरण सुनाया। वह जेल में बंद थे। कुछ क्रांतिकारी थे, वह आंदोलन में जेल में बंद हुए। जब वह जेल में बंद थे, तो वहां एक चमार कैदी भी बंद था। वह मुसलमान था और चमार का काम करता था। वह इतना मजबूत, इतना पहलवान आदमी था, इतना शक्तिशाली आदमी था कि कैसी भी जंजीर को हाथ से तोड़ देता था। मेरे इन मित्र को बड़ी हैरानी हुई। उन्होंने कहा कि मैं अपनी आंख से देखना चाहता हूं। तो उसे बुलाया, तो जुम्मन उसका नाम था और उससे कहा कि मैंने यह सुना है कि तुम कैसी भी जंजीर तोड़ सकते हो! उसने कहाः मैं कैसी भी जंजीर तोड़ सकता हूं और कैसी भी कैद को बाहर निकल सकता हूं। लेकिन अगर हुकूमत यह विश्वास दिला दे, मुझे फिर नहीं पकड़ेगी तो मैं दो दिन के भीतर कैसे भी इंतजाम के बाहर हो जाऊंगा। इन्होंने उससे कहा कि क्या मैं देख सकता हूं कि तुम जंजीरे तोड़ सकते हो, उसने जंजीर तोड़ कर बता दी। उसने कहाः जंजीर कोई दिक्कत नहीं है।
मेरे इन मित्र ने उससे कहाः जब उसने जंजीर तोड़ी तो उसने अल्लाह का नाम लिया और जंजीर तोड़ी। इन्होंने उससे कहा कि क्या तुम राम का नाम लेकर भी जंजीर तोड़ सकते हो? वह आदमी कंप गया। उसने कहाः राम का नाम? वह मुंह से भी नहीं ले सकता। तो वे मित्र मुझसे कहते थे वह आदमी इतना मजबूत और इतना ताकतवर था कि लोहे की जंजीर तोड़ देता था, लेकिन अल्लाह की जंजीर नहीं तोड़ सकता था। राम का नाम लेने में डर रहा था। वह जो लोहे की जंजीर तोड़ सकता है, वह भी राम का नाम लेने में डर रहा है कि राम... कैसे ले सकता है वह नाम? वह जो अल्लाह को मानता है, वह राम का नाम कैसे ले सकता है?
वहां चीन में एक फकीर हुआ है, फाशान। उसकी ख्याति थी कि वह किसी भी चीज
से भय नहीं खाता है। अगर कोई उसकी छाती में छुरा भौंक दे तो उसकी आंख की पलक नहीं झपेगी। वह आह नहीं करेगा। अगर उस पर सांप आकर लिपट जाते हैं तो वह उन सापों पर हाथ फेरता रहता है, उन्हें कुछ कहता नहीं। अगर पीछे जंगल में आकर शेर भी दहाड़ दे देता है तो लौट कर भी नहीं देखता। एक युवा साधु उसको

मिलने गया। वह जंगल में दूर पहाड़ में रहता था। फाशान बुड्ढा हो चुका था, उसकी ख्याति सारे मुल्क में फैल गई थी। अभय, फियरलेसनेस। यह नया युवा साधु उससे मिलने गया। इसने जाकर... जब यह जाकर उसके पास संध्या को बैठा, पीछे से एक रीछ ने आकर बहुत जोर से गर्जना की और एक झाड़ को हिलाया। फाशान तो अपनी जगह बैठा रहा जैसा बैठा था, यह युवक घबड़ा कर खड़ा हो गया। और इसने कहा कि जान खतरे में है। वह आदमी हंसने लगा, वह बूढ़ा फाशान हंसा और उसने कहाः तुम डरते हो, जो डरता है वह ईश्वर को बिल्कुल नहीं पा सकता। भय वाला आदमी कहां जाएगा।
भयभीत कहीं भी नहीं जा सकता है। इस युवा ने कहा मुझे बहुत घबड़ाहट लग गई, मुझे प्यास आ गई है, आप थोड़ा पानी मुझे ले आएं। वह फाशान झोपड़े के भीतर पानी लेने गया। जब वह पानी लेकर लौटा, तब तक इस युवक ने जिस चट्टान पर वह बूढ़ा साधु बैठा था, वहां लिख दियाः नमो बुद्धायः। बुद्ध का नाम लिख दिया। वह साधु वापस आया है, इसे पानी दिया, जैसे ही चट्टान पर चढ़ने लगा और उसे नीचे भगवान का नाम दिखाई पड़ा, उसका पैर वहीं का वहीं रुक गया और कंप गया। भगवान के पवित्र नाम पर कैसे पैर रख सकता हूं। वह युवा साधु बोला डरते आप भी हैं और भयभीत मन कैसे परमात्मा को पा सकेगा। फिर मेरा भय तो बिल्कुल स्वाभाविक है, आपका भय बिल्कुल अस्वाभाविक है। यह भगवान का पवित्र नाम है, इस पर पैर न रख जाए। सूक्ष्म बंधन है मनुष्य के मन पर, उसके विश्वासों के, उसकी आस्थाओं के। आप घूम रहे हैं, दुनिया में मुक्त हैं, बिल्कुल कोई कारागृह नहीं है, आपके हाथों में जंजीरें नहीं है। लेकिन अपने मन को देखें, आपके मन पर जंजीरें ही जंजीरें हैं। कहीं हिंदू की जंजीर है, कहीं मुसलमान की जंजीर है, कहीं ईसाई की जंजीर है। आपका चित्त जंजीरों से घिरा हुआ है।
अभी एक जैन साधु मेरे पास मेहमान थे। सुबह ही सुबह उन्होंने कहा कि मैं मंदिर जाना चाहता हूं। मैंने कहाः किसलिए जाना चाहते हो? उन्होंने कहा कि मैं थोड़ा प्रार्थना, ध्यान करने के लिए जाना चाहता हूं। तो मैंने कहा कि यह घर मेरा जो है, किसी भी मंदिर से ज्यादा शांत है, यहीं कर लें। वे बोले की नहीं, मंदिर शांत होता है। मैंने कहाः यहां का जो जैन मंदिर है, वह बाजार में हैं, वहां बड़ा शोरगुल है। फिर आप नहीं मानते तो मेरे बगल में एक चर्च है, वहां चले जाएं, वह बिल्कुल शांत है। आज रविवार का दिन भी नहीं है, वहां कोई भी नहीं होगा। मैं आपको साथ ले चलता हूं। वे बोलेः चर्च? मैं चर्च में कैसे जा सकता हूं? तो मैंने उनसे कहाः यह जो मन है, कैसे शांत होगा? कैसे ध्यान करेगा? जिसके बंधन इतने गहरे हैं, जो सोचता है कि जैन मंदिर में जाकर ही मैं शांत हो सकता हूं, ऐसा चित्त कैसे शांत होगा? एकांत चाहिए तो चर्च में है। क्या खतरा है चर्च में? सिर्फ वहां एक बोर्ड लगा हुआ है ऊपर कि यह चर्च है तो खतरा हो गया। यह आपके कुंद जहन, कुंठित मस्तिष्क का सबूत है, और क्या है? हमारे मस्तिष्क बहुत गहरी भीतर जंजीरों में जकड़े हुए हैं। और ऐसा जकड़ा हुआ मस्तिष्क कैसे आकाश की तरफ उड़ान भर सकता है? और परमात्मा की तरफ उड़ान तो आकाश की तरफ उड़ान है, पंख फैलाने होंगे। और जंजीरें तोड़ देनी होंगी और चित्त की जंजीरें न तोड़ें तो कोई मार्ग ठीक नहीं होगा। जंजीरों में बंधा हुआ यात्री कहीं भी पहुंच जाए, जहां भी पहुंचेगा, वहीं कैद होगी, कैद के बाहर नहीं पहुंच सकता है।
तो चित्त की जंजीरे तोड़ देना मार्ग है, सब भांति की जंजीरें तोड़ देना।
एक भांति की तोड़ कर दूसरे भांति की पकड़ लेने को मैं नहीं कहता। हिंदू कहता है, मुसलमान की, कि मुसलमान अपने चित्त की सारी जंजीरें तोड़ दे। लेकिन वह चाहता है कि हिंदू की जंजीरें स्वीकार कर ले। ईसाई चाहता है कि हिंदू अपने चित्त की सारी जंजीरें तोड़ दे, यह क्या राम और क्या रामायण? यह सब फिजूल है। लेकिन वह चाहता है, बाइबिल और क्राइस्ट की जंजीर उसको जकड़ ले। दुनिया भर के ये जितने, जितने धर्म हैं, यह अपनी जंजीरें लादना चाहते हैं और दूसरे की जंजीरों से मुक्त करवाना चाहते हैं, इसको वे कनवर्शन कहते हैं। इसको कहते हैं आदमी बदल गया, यह कनवर्शन नहीं है। यह सिर्फ गुलामी का परिवर्तन है। कनवर्शन जो मैं कह रहा हूं वह है--सब तरह की जंजीरे छोड़ दें और कोई नई

जंजीर स्वीकार न करें, तो आपका कनवर्शन हो गया। आपका धर्म में प्रवेश हुआ। आप मुक्त हुए, हिंदू से, मुसलमान से, ईसाई से सबसे मुक्त हो जाएं।
जब आपके ऊपर कोई जंजीर नहीं होगी, तब आप वहां खड़े होंगे, जहां से सत्य
की ओर नदी का प्रवाह शुरू होता है। हिंदू से मुसलमान हो जाना कोई कनवर्सन नहीं है। यह तो गुलामी को बदलना है। जैसे कि लोग मुर्दे कोढोकर ले जाते हैं कब्र की तरफ तो अरथी पर कंधे थक जाते हैं, कंधे बदल जाते हैं, इस कंधे से अरथी को इस कंधे पर कर लेते हैं। थोड़ी देर राहत मिलती है, फिर कंधा बदलना पड़ता है। तो हिंदू मुसलमान हो जाता है, उसे लगता है कोई परिवर्तन हुआ, मुसलमान हिंदू हो जाता है लगता है कोई परिवर्तन हुआ। जैन बौद्ध हो जाए, लगता है कोई परिवर्तन हुआ। यह सब फिजूल है, गुलामियों का परिवर्तन कोई परिवर्तन नहीं है। दासता नई थोड़ी देर अच्छी लगती है, फिर पुरानी होकर वैसी ही बोझिल हो जाती है। मैं जिस कनवर्सन के लिए कह रहा हूं, मैं जिस परिवर्तन के लिए कह रहा हूं, वह एक कारागृह से दूसरे कारागृह में जाने का नहीं है, बल्कि समस्त कारागृह के प्रति मुक्त हो जाने का है। अपने चित्त को कहीं न बांधें, अगर सत्य तक उसे ले जाना है। अपनी बुद्धि को कहीं रोकें नहीं, अगर सागर तक उसे पहुंचाना है। अपनी आत्मा पर कोई आरोपण न करें, किसी विश्वास का, किसी अविश्वास का, किसी सिद्धांत, किसी शास्त्र का, अगर सत्यता के आकाश तक उड़ने के पंख अपनी आत्मा को देने हैं। वही आत्मा जो उड़ने में मुक्त है, परमात्मा तक पहुंचने में समर्थ होती है। मार्ग है--न विश्वास, न अविश्वास; न आस्तिकता, न नास्तिकता; न हिंदू, न मुसलमान, न जैन, न बौद्ध, इन सबका निषेध, इन सारे बंधनों का त्याग और चित्त की मुक्ति। चित्त स्वतंत्र हो, चित्त की स्वतंत्रता ही सत्य का मार्ग है।
ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं सत्य के मार्ग के लिए। कल सुबह हम चर्चा करेंगे सत्य के द्वार के संबंध में। और परसों सुबह हम चर्चा करेंगे उस द्वार में प्रवेश के संबंध में। इन सारी चर्चाओं में मेरा ख्याल होगा कि आप केवल सुनेंगे नहीं बल्कि समझेंगे, क्योंकि सुनना काफी नहीं है। और अगर ठीक से आप समझते हैं तो कुछ बातें अपने आप स्पष्ट होनी शुरू हो जाती हैं। और ठीक से समझने के लिए जरूरी है कि कम से कम जितनी देर मुझे सुन रहे हैं, उतनी देर अपने बंधन को बगल में उतार कर रख देंगे।
वे जो आपके बंधन हैं, जो वे आपकी जंजीरें हैं, आपके हिंदू और मुसलमान होने की, अगर उनके ही पर्दे से आपने सुना तो फिर मेरी बातों को सुनना कठिन हो जाएगा, वह आप तक नहीं पहुंच पाएंगी। मैं कहता रहूंगा, आप तक नहीं पहुंच पाएंगी बातें, क्योंकि बीच में आपकी दीवालें होंगी। कम से कम जितनी देर मुझे सुनें, अपनी जंजीरों को उतार कर रख दें। जैसा कि हम किसी घर में जाते हैं तो जूते बाहर छोड़ देते हैं। जूते भीतर भी ले आएं तो कोई हर्जा नहीं है, लेकिन अपनी जंजीरे वहां द्वार पर बाहर छोड़ आएं। वह अपना हिंदू होना, मुसलमान होना, जैन होना बाहर छोड़ आएं तो फिर मुझे सुनना संभव हो सकेगा। और उस शांति से सुनने में शायद सुनते-सुनते ही आपके भीतर एक परिवर्तन
और क्रांति होनी शुरू हो जाए। अगर ठीक से कोई बात सुनी जाए तो तत्क्षण हमारे भीतर एक फर्क लाना शुरू कर देती है। और मैं आशा करता हूं कि चार दिन में आप सुनेंगे, शायद कोई बात आपके हृदय के किसी तार को छेड़ दे। कोई स्वतंत्रता की आकांक्षा सजग हो जाए और आप मुक्त होने की आकांक्षा से भर जाएं।

मेरी बातों को प्रेम से सुना है, उसके लिए बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन की खोज
तीसरा प्रवचन

द्वार

मेरे प्रिय आत्मन्!
बीते दो दिनों में हमने सत्य की तलाश में दो सीढ़ियों की बातें कीं। एक
तो जीवन में प्यास चाहिए, उसके बिना कुछ भी संभव नहीं होगा। और बहुत कम लोगों के जीवन में प्यास है। प्यास उनके ही जीवन में संभव होगी परमात्मा की या सत्य की जो इस जीवन को व्यर्थ जानने में समर्थ हो गए हों। जिन्हें इस जीवन की सार्थकता प्रतीत होती है, जब तक सार्थकता प्रतीत होगी, तब तक, तब तक वे प्रभु के जीवन के लिए लालायित नहीं हो सकते हैं। इसलिए मैंने कहा कि इस जीवन की वास्तविकता को जाने बिना कोई मनुष्य परमात्मा की आकांक्षा से नहीं भरेगा। और जो इस जीवन की वास्तविकता को जानेगा, वह समझेगा कि यह जीवन नहीं है, बल्कि मृत्यु का ही लंबा क्रम है। हम रोज-रोज मरते ही जाते हैं, हम जीते नहीं हैं। यह मैंने कहा। दूसरी सीढ़ी में हमने विचार किया कि यदि प्यास हो तो क्या अकेली प्यास मनुष्य को ईश्वर तक ले जा सकेगी? निश्चित ही प्यास हो सकती है और मार्ग गलत हो सकता है। उस स्थिति में प्यास तो होगी, लेकिन मार्ग गलत होगा तो जीवन और असंतोष और असंतोष से और भी दुख और भी पीड़ा से भर जाएगा। साधक अगर गलत दिशा में चले तो सामान्य जन से भी ज्यादा पीड़ित हो जाएगा, यह हमने दूसरे मार्ग के संबंध में विचार किया।
मार्ग के बाबत मैंने कहा कि विश्वास भी मार्ग नहीं है, क्योंकि विश्वास भी अंधा होता है, और अविश्वास भी मार्ग नहीं है, क्योंकि अविश्वास भी अंधा होता है। नास्तिक और आस्तिक दोनों ही अंधे होते हैं। और जिस के पास आंख होती है, वह न तो आस्तिक रह जाता है, और न नास्तिक रह जाता है। और जो व्यक्ति समस्त पूर्व धारणाओं से आस्तिक होने की, नास्तिक होने की, हिंदू होने की, मुसलमान होने की, यह होने की, वह होने की, समस्त वादों, समस्त सिद्धांतों और शास्त्रों से मुक्त हो जाता है, वही मनुष्य, उसी मनुष्य का चित्त स्वतंत्र होकर परमात्मा के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है। जो किसी विचार से बंधा है, जो किसी धारणा के चौखटे में कैद है, जिसका चित्त कारागृह में है, वह मनुष्य भी परमात्मा तक नहीं पहुंच सकता। परमात्मा तक पहुंचने में केवल वही सुपात्र बन सकेंगे, जो परमात्मा की भांति स्वतंत्र और सरल हो जाएं। जिनके चित्त स्वतंत्रता को उपलब्ध होंगे, वे ही केवल सत्य को पा सकते हैं। यह हमने विचार किया। और आज तीसरी सीढ़ी पर द्वार के संबंध में विचार करना चाहते हैं।
परमात्म-जीवन का द्वार क्या है? किस द्वार से प्रवेश होगा? मार्ग भी ठीक हो, लेकिन अगर द्वार बंद रह जाए तो प्रवेश असंभव हो जाता है। प्यास हो, और मार्ग भी हो, लेकिन द्वार बंद हो तो प्रवेश नहीं होता। इसलिए द्वार पर विचार करेंगे। क्या द्वार होगा? निश्चित ही, जिस द्वार से हम परमात्मा से दूर होते हैं, उसी द्वार से हम परमात्मा में प्रवेश भी करेंगे। जो दरवाजा आपको भीतर लाया है इस भवन के, वही दरवाजा इस भवन के आपको बाहर ले जाएगा। द्वार हमेशा बाहर और भीतर जाने का एक ही होता है, केवल हमारी दिशा बदल जाती है, हमारी उन्मुखता बदल जाती है। जब हम बाहर जाते हैं तब और जब हम भीतर आते हैं तब दोनों ही स्थितियों में द्वार वही होता है, केवल हमारे चलने की दिशा बदल जाती है। कौन सी चीज हमें परमात्मा के बाहर ले आई है? उस पर अगर करेंगे तो वही चीज हमें परमात्मा के भीतर भी ले जा सकेगी।
सुना होगा आपने, बहुत पुरानी बाइबिल की कथा है--अदम और ईव स्वर्ग के राज्य से बहिष्कृत किए गए, एक छोटे से कसूर पर। और वह कसूर बहुत विचारणीय है। वे इस कसूर पर स्वर्ग के राज्य के बाहर किए गए कि उन्होंने ज्ञान के वृक्ष के फल को खा लिया। वह जो ट्री ऑफ नालेज था, अदम के बगीचे में एक वृक्ष था, जिसका नाम था--ज्ञान का वृक्ष। और परमात्मा ने कहा कि तुम सारे वृक्षों के फल खाओ, लेकिन इस ज्ञान के वृक्ष का फल मत खाना। लेकिन उन्होंने उस ज्ञान के वृक्ष का फल खा लिया और वे उस स्वर्ग के राज्य से बाहर निकाल दिए गए। यह कहानी तो कहानी ही है, काल्पनिक ही है, लेकिन बहुत गहरे अर्थ उसमें

हैं। मनुष्य का निष्कासन हुआ है परमात्मा से, ज्ञान के फल के कारण। और अगर मनुष्य अपने ज्ञान को छोड़ने में समर्थ हो जाए तो वह परमात्मा में पुनः प्रवेश पा सकता है। ज्ञान आपको परमात्मा से दूर कर रहा है। आप सोचेंगे कि हम तो यह सोचते हैं कि ज्ञान हमें परमात्मा के निकट ले जाता है। मैं आपको कहूं आप जिसे ज्ञान समझते हैं, वही ज्ञान आपको परमात्मा से दूर करता है। अगर आप उस ज्ञान को छोड़ दें तो जोशेष रह जाएगा, या तो उसे डिवाइन इग्नोरेंस कहें, उसे दिव्य अज्ञान कहें, या फिर उसी को ज्ञान कहें, वह आपको परमात्मा से जोड़ देगा। हमारा मन हमें हमारी सत्ता से दूर ले जा रहा है। हम जितना विचार करते हैं, उतना ही अपने से दूर चले जाते हैं। और हम सारे लोग विचार कर रहे हैं। जो मनुष्य जितना ज्यादा विचार में उलझा होगा, वह उतना ही अपनी मूल सत्ता से दूर चला जाएगा।
रात आप स्वप्न देखते हैं, हो सकता है आप स्वप्न में अपने घर में सोए हों, लेकिन स्वप्न में आप बहुत दूर निकल जा सकते हैं, आप चांद पर जा सकते हैं। जाग कर आप पाएंगे आप अपने झोपड़े में प.ड़े थे, लेकिन स्वप्न में आप चांद पर चले गए थे। तो आपके घर और चांद के बीच की जो दूरी थी वह आपके स्वप्न ने पैदा कर दी थी। आपका स्वप्न आपको दूर ले गया था। इसी भांति हमारे विचार जहां हम हैं, वहां से हमें दूर ले जा रहे हैं। और जो मनुष्य विचार में जितना दूर चला जाता है, उतना ही अपने बीच और परमात्मा के बीच फासला कर लेता है। अगर हमारे सारे विचार शून्य हों, सारे विचार विलीन हो जाएं तो हम वहां होंगे जहां परमात्मा है। इसलिए परमात्मा की प्रार्थना में, या परमात्मा के ध्यान में और कुछ भी करने की बात नहीं है, कोई मनुष्य अगर सारे विचार छोड़ने में समर्थ हो जाए तो वह प्रभु में प्रवेश पा जाएगा। विचार के द्वार से हम परमात्मा से बाहर हुए हैं, विचार के द्वार से ही वापस लौट कर हम परमात्मा में प्रविष्ट हो सकते हैं।
एक, मैंने सुना है, एक कहानी मैंने सुनी है। एक आदमी को यह ख्याल हुआ
कि मैं दुनिया का अंत खोजने जाऊं। उसने सोचा कहीं न कहीं दुनिया का अंत जरूर आता होगा। कहीं न कहीं दुनिया जरूर समाप्त होती होगी। वह आदमी खोजने गया, उसने बहुत वर्षों यात्रा की, उसके मित्रों ने, उसके प्रियजनों ने उसे रोका था, इस यात्रा पर मत जाओ, पता नहीं दुनिया कहीं समाप्त होती हो या न होती हो? लेकिन उस आदमी ने कहाः जब दुनिया है तो कहीं जरूर शुरू होती होगी और कहीं जरूर समाप्त होती होगी। वह इस जिद पर, इस तर्क पर दुनिया के अंत की खोज में चला गया। उसने बहुत यात्राएं कीं, वह युवा निकला था और बूढ़ा हो गया। थक गए उसके पैर, उसका मन भी घबड़ाने लगा कि पता नहीं दुनिया का अंत आएगा या पहले मेरा अंत आ जाएगा। लेकिन अंततः बहुत थका हुआ, बहुत यात्रा करने के बाद वह एक जगह पहुंचा, जहां एक तख्ती पर लिखा हुआ थाः हिअर एण्ड्स दि वर्ल्ड। वहां लिखा हुआ थाः यहां दुनिया समाप्त हो जाती है। वहां तो कोई भी नहीं था, वहां तो गहरा सन्नाटा था। सिर्फ एक छोटा सा मंदिर था, और वह तख्ती लगी हुई थी। वह तख्ती से आगे बढ़ा और थोड़ी ही दूर जाकर उसने पाया कि दुनिया वहां समाप्त हो गई है। वहां सीमा-रेखा आ गई है। और उस तरफ तो क्यास है और कुछ भी नहीं है। उस तरफ तो कुछ भी नहीं है, अराजकता है, वहां तो निराकार, अंधकार, शून्य फैला हुआ है। उसने झांक कर देखा, उसके प्राण कंप गए। अगर आपने किसी पहाड़ से झांक कर देखा हो तो प्राण कंप जाते हैं। उसने तो वहां से खड़े होकर देखा जहां दुनिया समाप्त हो जाती थी। वहां अनंत खड्ढ था और नीचे कोई तल नहीं था। वहां ऊपर भी अनंत था और वहां भी कोई तल नहीं था। वहां आगे भी शून्य था और कोई तल नहीं था। उसने झांक कर देखा, उसके प्राण कंप गए। वह वापस भागा हुआ आया, वह मंदिर के द्वार पर जाकर गिर पड़ा। पुजारी ने उसे उठाया और उस पुजारी ने पूछा कि क्या हुआ?
उसने कहाः मैं दुनिया के अंत पर पहुंच गया था, मेरे प्राण कंप रहे हैं, मैं बहुत घबड़ा गया हूं। उस पुजारी ने कहाः अगर तुम उस जगह जहां सब समाप्त हो जाता है, कूद जाते तो तुम्हें वह मिल जाता जहां सब शुरू होता है। अगर तुम उस अनंत गड्ढे में कूद जाते जहां दुनिया समाप्त हो जाती है, तुम्हें परमात्मा मिल जाता।

जहां दुनिया समाप्त होती है, वहीं परमात्मा का प्रारंभ है। जहां हमारे विचार की दुनिया टूटती है, समाप्त होती है, वहीं हम परमात्मा के जीवन में प्रवेश कर जाते हैं। जो आदमी विचार में है, वह आदमी दुनिया में है। और जो आदमी विचार के बाहर है, वह दुनिया के बाहर है। इसलिए कोई यह न सोचे कि एक आदमी घर छोड़ कर भाग जाए तो वह संन्यासी हो गया है। घर छोड़ कर भागने से कोई संन्यासी नहीं होता। लेकिन अगर कोई विचार को छोड़ दे तो जरूर संन्यासी हो जाता है। विचार को ही मैं घर कहता हूं। विचार को ही मैं गृहस्थी कहता हूं। विचार को ही मैं संसार कहता हूं। जो विचार से मुक्त हो जाता है, वह संन्यास में प्रविष्ट हो जाता है। और जो विचार को छोड़ने में समर्थ हो जाता है, उसका घर छूट जाता है। फिर वह कहीं भी हो, उसका कोई घर नहीं है। ये दीवालें जो आपको दिखाई पड़ती हैं, मिट्टी और पत्थर की, यह आपका घर नहीं है। ये दीवालें किसी को क्या रोकेंगी? आपके घर हैं आपके विचार, और विचारों की दीवालें। वे आपको रोके हुए हैं। तो मैं आपको कहना चाहूंगा, आज की इस चर्चा में कि विचार से मुक्त हो जाना द्वार है। और फिर विचार हमारे बहुत हैं, जन्म-जन्मों से, परंपराओं-परंपराओं से, सदियों-सदियों से विचार का पोषण हुआ है। हमने विचार सीखे हैं। हमने विचार इकट्ठे किए हैं। विचार की पर्त-पर्त हमारे मन पर इकट्ठी हो गई है। बहुत धूल इकट्ठी हो गई है, उसकी बहुत दीवालें बन गई हैं। अगर हम अपने भीतर जाएंगे तो सिवाय विचार के हमको कुछ भी नहीं मिलेगा।

यह आपने सुना होगा, लोग कहते हैं, पुराने ग्रंथ कहते हैं, पुराने ऋषि कहते हैं, अपने भीतर जाओ तो वहां आत्मा के दर्शन होंगे। कभी आप अपने भीतर गए? अगर आप अपने भीतर जाएंगे तो वहां विचारों के दर्शन होंगे। आत्मा का कोई दर्शन नहीं होगा। जब भी आप भीतर जाएंगे, आपको विचारों के दर्शन होंगे। आत्मा-वात्मा का कोई दर्शन आपको नहीं हो सकता, ये विचारों की ही पर्तें इतनी ज्यादा हैं, ये विचारों की लहरें ही इतनी ज्यादा हैं कि जब तक इनको प्रवेश करके भीतर न जाएं, तब तक आत्मा का दर्शन नहीं हो सकता। आप करीब-करीब, थोड़ा-बहुत घूम कर वापस लौट आएंगे। विचारों को अनुभव करके वापस लौट आएंगे। जैसे समुद्र पर बहुत लहरें हों, बहुत तूफान आया हो और कोई आदमी जाए और उन लहरों को ही समुद्र मान कर वापस लौट आए, वैसी ही गलती आपकी हो जाएगी। समुद्र लहरों में नहीं है, यद्यपि लहरें जरूर समुद्र में होती हैं। लहरें जरूर समुद्र में होती हैं, लेकिन समुद्र लहरों में नहीं है। समुद्र बहुत ज्यादा है। समुद्र बिना लहरों के भी हो सकता है, लेकिन लहरें बिना समुद्र के नहीं हो सकतीं। बिना विचार के आपकी आत्मा हो सकती है, लेकिन आपके विचार बिना आत्मा के नहीं हो सकते। पर वे विचारों से ही हम लौट कर आ जाते हैं। वह डेविड ह्यूम हुआ वहां, एक अंग्रेज विचारक हुआ। उसने लिखा, मैंने सुना कि नो दायसेल्फ, मैंने सुना कि अपने को जानो, मैंने सुना कि अपने भीतर जाओ तो मैं बहुत बार अपने भीतर गया हूं, लेकिन सब बकवास है। वहां कोई आत्मा नहीं मिलती है, वहां तो सिर्फ विचार ही विचार मिलते हैं, कभी इस विचार से टकरा जाता हूं, कभी उस विचार से; कभी इस स्मृति से, कभी उस कल्पना से; कभी यह वासना, कभी वह विकार; इन्हीं से टकरा कर वापस लौट आता हूं। इन्हीं की भीड़ है भीतर, वहां कोई आत्मा नहीं है। उसने ठीक लिखा, उसने ईमानदारी की बात लिखी। यही है, जहां तक आप भीतर जाएंगे, इसी को पाएंगे। लेकिन इसके भीतर भी जाना संभव हो सकता है। और अगर ह्यूम मुझे मिला होता तो उससे मैं यही कहता कि यह तो तुम बिल्कुल ही ठीक कहते हो, कभी विचार से टकरा जाता हूं, कभी वासना से, कभी कल्पना से, लेकिन कौन टकरा जाता है। जो टकरा जाता है, वह विचार नहीं हो सकता है। कौन भीतर जाता है? वह जो बोध भीतर जाता है और देखता है कि विचार हैं, वह बोध क्या है? वह बोध विचार नहीं है। ह्यूम विचार नहीं है, ह्यूम तो देखने वाला है, जो अनुभव कर रहा है कि विचार मिल गए, कल्पनाएं मिल गईं, स्मृतियां मिल गईं; जिसके सामने ये विचार घूम रहे हैं, यह विचारों की फिल्म चल रही है, वह कौन है? निश्चित ही वह विचार नहीं है, वह देखने वाला जो द्रष्टा है, वह जो साक्षी है, वह जो विटनेस है, वह अलग है। और उसको ही जानना, सत्य में जाने का द्वार है। बिना विचार को छोड़े यह नहीं होगा, फिर

स्मरण रखें कि हम विचार को क्यूं इकट्ठा करते हैं? अगर हम यह नहीं समझ सकेंगे तो हम विचार को छोड़ भी नहीं सकेंगे। तो कुछ विचार के बाबत समझ लेंगे, तो विचार को छोड़ने में, विचार से ऊपर उठने में आसानी हो जाएगी।
हम विचार को इकट्ठा क्यों करते हैं? असल में हम कोई भी चीज इकट्ठी क्यों करते हैं? हम धन क्यों इकट्ठा करते हैं? शायद कभी यह नहीं सोचा होगा कि हम धन क्यों इकट्ठा करते हैं? जरूरत है, एक सीमा पर जरूरत भी पूरी हो जाती है, फिर भी हम धन को इकट्ठा करते रहते हैं।
मैंने सुना, कितने दूर तक आपकी जरूरत होगी? एण्ड्रू कारनेगी अमरीकी करोड़पति मरा, तो कोई चार अरब की संपत्ति अपने पीछे छोड़ कर मरा। लेकिन अभी भी कमा रहा था। अभी भी इकट्ठा कर रहा था। चार अरब रुपये कि किसी को भी कोई जरूरत नहीं हो सकती है; जरूरत तो खत्म हो गई। लेकिन फि र भी रुपये इकट्ठे करने का पागलपन सवार है। आपकी जरूरत पूरी हो जाती है, फिर भी आप इकट्ठा करते हैं, क्यों? इकट्ठा करने से आपको अपने होने पर विश्वास आ जाता है। आपको लगता है, मैं कुछ हूं। आपको विश्वास आ जाता है कि मेरी भी कोई सत्ता है। आपको अनुभव होने लगता है कि मैं सुरक्षित हूं, मेरी सिक्योरिटी है। जितना ज्यादा संग्रह आपके पास होता है, आपको लगता है मैं कुछ हूं, मैं नकार नहीं हूं। आपको लगता है, मैं मृत्यु के मुकाबले खड़ा हो सकूंगा। आपको लगता है, मुझे मिटाया नहीं जा सकता, मेरे पास ताकत है।
संग्रह शक्ति को इकट्ठा होने का भ्रम दे देता है। इसलिए जितने शक्तिहीन लोग होते हैं, वे जरूर किसी न किसी तरह के संग्रह में पड़ जाते हैं। जितना दरिद्र आदमी होता है, उतना ही ज्यादा धन को इकट्ठा करने में लग जाता है। क्योंकि दरिद्रता को छिपाने का और कोई रास्ता नहीं है। दरिद्रता को छिपा लेने का और कोई रास्ता नहीं है, सिवाय इसके कि धन का संग्रह इकट्ठा हो जाए तो हम भूल जाएंगे कि हम दरिद्र हैं। लेकिन दरिद्रता मिटेगी नहीं। धन दरिद्रता को कभी न मिटाया है और न कभी मिटा सकता है। कितना ही धन इकट्ठा हो, आप अगर दरिद्र हैं तो दरिद्र रहेंगे और बिल्कुल ही आपके पास धन न हो, अगर आप भीतर समृद्ध हैं तो आप समृद्ध रहेंगे। इसलिए दुनिया में यह अदभुत घटना घटी है कि बादशाह यहां दरिद्र देखे गए हैं और यहां दरिद्र भी बादशाह देखे गए हैं।
एक फकीर एक गांव के एक रास्ते पर खड़ा था और उसने कहा कि मेरे पास कुछ पैसे हैं, और ये मैं पैसे इस नगर के सबसे गरीब आदमी को देना चाहता हूं। तो गांव के सारे लोग इकट्ठे हो गए, जो बहुत गरीब थे, उन्होंने आकर कहा कि हमें दे दो। गरीबों ने दावा किया कि हम सबसे ज्यादा गरीब हैं, हमें मिल जाएं। उस फकीर ने कहा कि रुपये तो मैं जरूर दूंगा, किसी न किसी गरीब को मुझे देना है, लेकिन सबसे बड़े गरीब को देना है। तो अभी जब सबसे बड़ा गरीब आएगा तो मैं दे दूंगा। तो भिखमंगे से भिखमंगे लोग आए। गांव में एक अंधा, लंगड़ा, अपाहिज भिखमंगा था, जिसके पास कुछ भी नहीं था, जिसके कपड़े भी नहीं थे, जो बिल्कुल नंगा पड़ा रहता था, वह भी घिसटता हुआ आया और उसने कहाः मुझे दे दो और मुझसे ज्यादा दरिद्र आदमी और कहां मिलेगा? उसने कहाः ठहर जाओ, दरिद्रो, ठहर जाओ, सबसे बड़ा दरिद्र आ जाए तो मैं उसे दूंगा। अब तो गांव में उससे बड़ा दरिद्र कोई भी नहीं था। लेकिन तभी राजा की सवारी निकली और उस फकीर ने अपने पैसे उस राजा की सवारी के ऊपर फेंक दिए। उस राजा ने कहाः यह क्या है? रुपये क्यों मेरे पास फेंके? और वह भिखमंगे चिल्लाने लगे कि तुमने तो वादा किया था, हम सबसे गरीब आदमी को देंगे और तुमने राजा को रुपये दे दिए हैं। उस फकीर ने कहाः इससे ज्यादा, दरिद्र, इससे ज्यादा गरीब, इससे ज्यादा निर्धन इस गांव में और कोई भी नहीं है। क्यों? क्योंकि इसे कितना भी मिल जाए, इसकी दरिद्रता पूरी नहीं होती। यह अभी और चाहता है। इसे अभी और चाहिए।
जो आदमी जितना ज्यादा मांग रहा है, वह उतना ज्यादा दरिद्र है। वह उतना ज्यादा भीतर भूखा है। उतनी ज्यादा भीतर उसके अभीप्सा है, संग्रह को इकट्ठा करने की इच्छा और वासना है। उतनी महत्वाकांक्षा है। तो जो बहुत दरिद्र होता है, वह बहुत धनिक होने की कोशिश में लग जाता है। ताकि जब धन उसके पास हो जाएगा तो वह अपनी आंखों में यह विश्वास कर ले कि मैं दरिद्र नहीं हूं। और इसी भांति जो बहुत अज्ञानी होता है, वह विचारों को इकट्ठा

करने में लग जाता है, ताकि विचारें के संग्रह से ज्ञान का भ्रम पैदा हो जाए। ताकि बहुत विचार उसके पास हों, बहुत से शास्त्र उसे याद हो जाएं, बहुत से पाठ उसे कंठस्थ हो जाएं तो उसे यह भ्रम पैदा हो जाए कि मैं जानता हूं। अज्ञान काटता है, अज्ञान अहंकार को चोट पहुंचाता है। यह जानना कि मैं नहीं जानता हूं, बड़ा कष्टपूर्ण है। तो फिर विचारों को इकट्ठा कर लेता है आदमी। और उधार विचारों को जो हमेशा दूसरों के होते हैं, उनको अपना मान लेता है। और कहता है, ये मेरे विचार हैं। एक भी विचार आपका नहीं है। विचार करेंगे तो एक भी विचार आपका नहीं है। कहीं न कहीं से उधार इकट्ठा किया गया है और उस संपत्ति को अपनी मान कर हम बड़ी मौज में ज्ञानी होने का मजा ले लेते हैं। ज्ञानी होने का दंभ ले लेते हैं। यह अहंकार की तृप्ति है। संग्रह सब प्रकार का संग्रह अहंकार की तृप्ति है। विचार का संग्रह भी अहंकार की तृप्ति है। इसका मतलब यह नहीं है कि जो संग्रह को छोड़ देते हैं, वे कोई अहंकार के ऊपर उठ जाते होंगे। अहंकार के रास्ते बड़े सूक्ष्म हैं। संग्रह भी अहंकार की तृप्ति है और संग्रह को छोड़ना भी अहंकार की तृप्ति है।
एक आदमी के पास बहुत संग्रह है तो वह सोचता है मैं कुछ हूं, फिर एक आदमी सारे संग्रह को छोड़ कर खड़ा हो जाता है और तब जानता है कि मैं भी कु छ हूं, मैंने सब त्याग दिया है। त्याग की चेष्टा भी अहंकार की ही पूर्ति है। इकट्ठा करने की चेष्टा भी अहंकार की पूर्ति है। तो विचार को इकट्ठा कर लें तो भी अहंकार हो जाता है और एक आदमी यह भी कह सकता है, मैं तो कुछ भी नहीं जानता हूं, मैं तो बिल्कुल सरल आदमी हूं, उसमें भी अहंकार हो सकता है। सवाल हमेशा दावे का है। जहां दावा है वहां अहंकार है। सब संग्रह और सब संग्रह का त्याग अहंकार की ही तराजू पर दोनों पलड़े झूलते रहते हैं। अहंकार का कांटा दोनों पलड़ों कोझुलाता रहता है। मैं यह कहना चाहता हूं कि जब तक आपको यह न दिखाई पड़े कि अपने अज्ञान को छिपाने के लिए आप विचारों का संग्रह कर रहे हैं, तब तक आप विचारों से मुक्त नहीं हो सकते।
अगर आप भीतर थोड़ा देखें, आप क्या जानते हैं? आत्मा के संबंध में जानते हैं, ईश्वर के संबंध में जानते हैं? नहीं जानते। लेकिन गीता को जानते हैं, कुरान को जानते हैं, बाइबिल को जानते हैं, महावीर को जानते हैं, कुंद-कुंद को जानते हैं और न मालूम किस-किस को जानते हैं। इनको जानने के कारण आपको यह भ्रम होता है कि मैं जानता हूं। जानते वे होंगे और आप भ्रम में पड़ जाते हैं कि मैं जानता हूं। विचार की प्रतिध्वनियां सदियों तक सुनी जाती हैं, महावीर पच्चीस सौ वर्ष पहले बोले होंगे, जरथुस्थ बोला होगा, मो.जेज बोलेहोंगे, हजारों वर्ष हो गए, लेकिन उनकी प्रतिध्वनियां अब तक हमारे मनों में गूंज रही हैं, और ज्ञान की प्रतिध्वनियों को हम ज्ञान समझ लेते हैं।
मैं एक पहाड़ के पास था। मेरे एक मित्र भी मेरे साथ थे। वहां एक ईको- पॉइंट था। वहां जाकर आप आवाज करें, तो पहाड़ उस आवाज को दोहरा देता। मेरे मित्रों ने आवाज की, पहाड़ ने आवाज दोहरा दी। लेकिन हमने तो आवाज की थी, पहाड़ ने कोई आवाज नहीं की। पहाड़ ने तो केवल इको कर दिया। प्रतिध्वनि कर दी। महावीर बोलते हैं, बुद्ध बोलते हैं, हम इको कर देते हैं। हम भी उसे दोहरा देते हैं। फिर हमारे बच्चे उसे दोहरा देते हैं। फिर उनके बच्चे उसे दोहरा देते हैं। ऐसा सेकेंड हैंड नहीं, हजारों-हजारों हाथ से होकर वह जो ईको है, वह जो प्रतिध्वनि है, वह फीकी होती जाती है, फीकी होती जाती है, उसी को हम विचार कहते हैं। विचार अनुभूति की प्रतिध्वनि है।
जिनको अनुभव हुआ होगा, उनसे वह फर्स्ट हैंड, सीधा उठता है। और फिर हमारे मन उसको प्रतिध्वनि करते रहते हैं। फिर क्रमशः पीढ़ी-पीढ़ी वह प्रतिध्वनि होती जाती है, उसी प्रतिध्वनि को पकड़ कर हम बैठे रह जाते हैं और उसी को हम विचार कहते हैं। यह प्रतिध्वनि बिल्कुल फीकी है और फिजूल है। इसका कोई मूल्य नहीं है। मूल्य अनुभूति का होता है। विचार का कोई मूल्य नहीं होता है। और आप स्मरण रखें कि अगर इस भांति विचारों को पकड़ कर आप बैठ गए तो आप छाया को पकड़े हुए हैं। एक बिल्कुल थोथी और मुर्दा चीज को पकड़े हुए हैं, जिसका कोई मूल्य नहीं है। और हम सारे लोग विचार को पकड़ कर बैठ जाते

हैं। यह विचार की प्रतिध्वनि से मुक्त होना बहुत-बहुत जरूरी है। जब तक आप प्रतिध्वनि ही करते रहेंगे, स्मरण रखें, प्रतिध्वनि सतह से होती है और अनुभूति केंद्र से आती है। अगर एक पहाड़ के पास आप चिल्लाते हैं तो पहाड़ के प्राणों तक थोड़ी आपकी आवाज पहुंचती है, पहाड़ की ऊपर की पर्त ही आपकी आवाज को वापस लौटा देती है। अभी मैं बोल रहा हूं तो मेरी आवाज कोई थोड़ी आपके प्राणों तक पहुंच जाएगी! आपकी परिधि आपके बाहर का जो पर्त है, वही मेरी आवाज को वापस लौटा कर प्रतिध्वनि कर देगी। आपके प्राण अछूते रह जाएंगे, प्राण कभी विचार को नहीं छू पाते हैं। न कभी विचार प्राण को छू पाता है। और इसलिए विचार के माध्यम से सत्य की कोई उपलब्धि नहीं होती।
विचार के माध्यम से सत्य की कभी कोई उपलब्धि नहीं होती। हां, यह हो सकता है कि सत्य की उपलब्धि हो तो बताने का काम विचार कर सके। विचार अभिव्यक्ति का माध्यम हो सकता है, मीडियम ऑफ एक्सप्रेशन हो सकता है, लेकिन उपलब्धि का मार्ग नहीं। विचार बताने का मार्ग हो सकता है, लेकिन पाने का मार्ग नहीं है। सत्य को कोई पा ले तो विचार से कह सकता है, लेकिन विचार के द्वारा कोई सत्य को नहीं पा सकता। लेकिन यह भूल हो जाती है। यह हमको भूल हो जाती है कि हम विचार के द्वारा सत्य को पा लेंगे। इसलिए हम सारे लोग जो सत्य में उत्सुक होते हैं, वे विचार का संग्रह करने लगते हैं। विचार का संग्रह घातक है। और जो विचार के संग्रह के भ्रम में पड़ जाएगा, वह कुछ प्रतिध्वनियों को पकड़ कर बैठा रह जाएगा और जीवन उसका व्यतीत हो जाएगा। ये प्रतिध्वनियां आपकी नहीं है, यह जानना चाहिए। ये प्रतिध्वनियां कितने ही बड़े लोगों की हों, इनका कोई मूल्य नहीं है। ये प्रतिध्वनियां ही हैं। और आप जब तक प्रतिध्वनि करते रहेंगे, तब तक आप एक यंत्र की भांति हैं, आपका अपना कोई जीवन नहीं है। और यह कितना अपमानजनक है कि मैं प्रतिध्वनि करता रहूं? दूसरे लोगों को ईको करता रहूं। दूसरे लोग बोलें और मैं उनको दोहराता रहूं। मैं रिपीट करता रहूं। यह कितना अपमानजनक है। एकाध अनुभूति तो मेरे भीतर से आनी चाहिए जिसे मैं कह सकूं कि यह मेरी है। और मैं इसे किसी से दोहरा नहीं रहा हूं। यह मेरे मन में आकर किसी की आवाज नहीं है, यह मेरी आवाज है। यह मेरे भीतर से आ रही है, मेरे प्राणों से यह फूल निकला है। कागज के फूल होते हैं, हम उन्हें ऊपर से चिपका लेते हैं। असली फूल होते हैं, वे भीतर से आते हैं, उनकी जड़े होती हैं।
ये आपके जो विचार हैं, सब कागज के फूलों की भांति हैं, ये ऊपर से आपने चिपका लिए हैं। न इनसे सुगंध आ सकती है, न इनमें प्राण हैं। लेकिन इन फूलों को अगर फूल मान लिया तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। और असली फूल जो आपके भीतर से आ सकते थे, जिनके बीज आपके भीतर थे, उतने ही जितने कि महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट के भीतर हैं, वही प्राण आपके भीतर भी बैठा है। वही परमात्मा आपकी गहराई में भी मौजूद है जो उन्हीं फूलों को पैदा कर सकता है। उन्हीं फूलों को, उन्हीं ध्वनियों को, उन्हीं सीधे अनुभवों को आपके भीतर भी जन्माया जा सकता है। लेकिन आप कागज के फूल लगा कर चुप बैठ जाएंगे तो वे बीज पड़े रह जाएंगे और कभी फूल नहीं बन सकेंगे। इन कागज के फूलों को हटा देना जरूरी है ताकि आपका मन मुक्त हो जाए, खुल जाए और आप अपने बीजों पर मेहनत कर सकें। जो दूसरों के विचारों पर विश्वास कर लेता है, वह अपनी अनुभूति को जगाने का ख्याल ही भूल जाता है।
इसलिए मैंने कहा कि विचार मार्ग नहीं है। स्वभावतः ख्याल उठेगा, तब क्या अविचार मार्ग है? क्या जड़ अज्ञानी जिसके भीतर कोई विचार नहीं उठते उसने सत्य को पा लिया है? क्या एक आदमी मूर्छा में पड़ा हो, मारफिया में पड़ा हो तो उसने सत्य को पा लिया है? क्योंकि उसके भीतर कोई विचार नहीं उठ रहे। स्वभावतः यह मुझसे जगह-जगह पूछा जाता है कि आप कहते हैं, विचार से सत्य नहीं मिल सकता तो क्या अविचार से सत्य मिलेगा? जो जड़ बुद्धि है, उसको सत्य मिल गया है? या एक आदमी जो बेहोश पड़ा हुआ है, उसको सत्य मिल गया है? या एक आदमी मूर्च्छित हो गया है, नशा कर लिया उसको सत्य मिल गया है? निश्चित ही जब मैं कहता हूं विचार मार्ग नहीं है, तो मेरा मतलब यह नहीं है कि अविचार मार्ग है।

अविचार भी मार्ग नहीं है। लेकिन विचार मार्ग नहीं है, इसके कारण बहुत
से इस बात के प्रचार के कारण कि विचार मार्ग नहीं है, अगर यह प्रचारित हो जाए, अगर यह ख्याल में आ जाए तो हम सोचते हैं, अविचार को साध लें तो फिर सत्य मिल जाएगा। अविचार के साधने से भी सत्य नहीं मिलता है। अविचार के साधने के अनेक-अनेक प्रयोग सारी दुनिया में प्रचलित हुए हैं। जितने प्रकार के कनसनट्रेशन हैं, जितने प्रकार की एकाग्रताएं हैं, सब अविचार का मार्ग है, अगर कोई मनुष्य अपने मन को किसी एक चीज पर बहुत गहराई से जबरदस्ती जमा ले, थोड़ी देर में उसके विचार खो जाएंगे। लेकिन विचार ही नहीं खोएंगे थोड़ी देर में उसका होश भी खो जाएगा। वे मूर्च्छित हो जाएंगे। जितने कनसनट्रेशन के प्रकार हैं, एक आदमी सूरज की तरफ आंखें खोल कर खड़ा हो जाए और सूर्य को देखता रहे, अपलक देखता रहे, टकटकी लगा कर देखता रहे तो थोड़ी देर में मूर्च्छित होकर गिर जाएगा। एक आदमी अगर दिए के पास बैठ जाए और उसे लौ को बिना आंखें झपकाए पांच मिनट तक देखता रहे तो अपने आप वहीं सो जाएगा।
एक आदमी बैठा हुआ घंटे भर तक राम-राम, राम-राम करता रहे, करता रहे बिल्कुल दूसरे विचार को भीतर न घुसने दे, राम की ही, राम की ध्वनि को दोहराता रहे, जप करता रहे, जिसे जप कहते हैं, घंटे भर में मूर्च्छित हो जाएगा। इसीलिए मूर्च्छित हो जाएगा कि कोई भी एक चीज अगर चित्त को पकड़ ले तो चित्त उससे बोर हो जाता है, बोर्डम पैदा हो जाती है। घबड़ाहट, बेचैनी, परेशानी पैदा हो जाती है। उस परेशानी में एक ही रास्ता रह जाता है कि चित्त सो जाए। आप बच्चों को सुलाते हैं, एक गीत की कड़ी को दोहरा देते हैं। उसी-उसी कड़ी को बार-बार दोहराते हैं, बच्चा थोड़ी देर में सो जाता है। आप सोचते होंगे कि आपके संगीत के कारण सो रहा है, सो रहा है, एक ही कड़ी को बार-बार सुनने से उसके भीतर बोर्डम पैदा होती है, उसका चित्त घबड़ा जाता है, ऊब जाता है।
ऊबने की वजह से नींद आ जाती है। किसी भी चीज से ऊब जाएं तो नींद आ जाएगी। सभाओं में आपने देखा होगा, अनेक-अनेक लोग सो रहे हैं, बोलने वाले समझते हैं कि सोने वालों की गलती है। केवल बोलने वाला इस भांति बोल रहा है कि लोग ऊब गए हैं और नींद आ गई है, सुनने वालों की कोई गलती नहीं होती। वह बोलने वाला इस भांति बोल रहा है कि लोग ऊब गए हैं, ऊब की वजह से नींद आ गई है। अगर चित्त ऊब जाए तो चित्त सोना चाहता है। अगर चित्त सजग रहना चाहे तो उसके लिए ऊब नहीं होनी चाहिए। किसी भी भांति चित्त को ऊबा दें, घबड़ा दें, परेशान कर दें तो वह सो जाएगा।
यह तरकीब दुनिया में मिल गई तो लोगों ने न मालूम कितने प्रकार के जप निकाल लिए? कितने प्रकार की मालाएं निकाल लीं। अब एक ही माला के गुरियों को आप सरकाते रहें, वही-वही गुरिया बार-बार सरकेगा। अगर चित्त उसी में लगा रहा थोड़ी देर में चित्त सो जाएगा। और चित्त को सुला देने से विचार तो बंद हो जाएंगे, लेकिन विवेक नहीं जागेगा। विचार का बंद हो जाना ही काफी नहीं है, विवेक भी जागना चाहिए। कागज के फूल ही हट जाना काफी नहीं है, असली फूल के भी अंकुर आने चाहिए। नहीं तो कागज के फूल हटा देने से कुछ भी नहीं होगा। फिर तो बेहतर है कागज के फूल ही लगे रहें, कम से कम कोई रौनक तो होती है। कम से कम कुछ तो सुंदर मालूम होते हैं। कागज के फूल भी हट जाएं, असली फूल भी न आएं तो बड़ी गड़बड़ हो जाएगी।
अविचार साधने के बहुत उपाय सारी दुनिया में चले, आपको पता होगा साधु- संन्यासियों ने वेद के समय से लेकर, सोमरस से लेकर गांजे तक, सबका उपयोग किया है, सिर्फ इसीलिए कि किसी भांति विचार बंद हो जाएं। अभी अमरीका में और नये-नये सोमरस के प्रयोग हैं। लिसर्जिक एसिड है, मैस्कलीन है, उनके इंजेक्शन हैं। मैस्कलीन का इंजेक्शन ले लें, छह घंटे तक चित्त बिल्कुल सो जाता है। और पूर्ण शांति हो जाती है, विचार बंद हो जाते हैं। छह घंटे के बाद आप उठ कर कहेंगे, बड़ा आनंद था। क्योंकि न कोई विचार थे, न कोई चिंता थी, न कोई पीड़ा थी। सारे दुनिया में साधुओं का बहुत सा हिस्सा अफीम और गांजे का उपयोग इसीलिए करता रहा कि विचार को बंद करने में ये उपयोगी हैं। और अफीम और गांजा जो करते हैं, वही कनसनट्रेशन भी करता है, नाम का जप हो, दीये

का ध्यान हो, सूरज की तरफ आंख लगाई हो, त्राटक किया हो; कुछ भी किया हो, ये सारी की सारी तरकीबें चित्त को सुला देने की, मूर्च्छित कर देने की हैं। मूर्च्छा से कोई सत्य तक नहीं पहुंचता है।
अविचार से भी कोई सत्य तक नहीं पहुंचता है। हां, अविचार में एक बात हो सकती है, आप किन्हीं कल्पनाओं को देखने में समर्थ हो सकते हैं। राम के दर्शन हो सकते हैं, कृष्ण के दर्शन हो सकते हैं। काली के दर्शन हो सकते हैं, बुद्ध, महावीर के दर्शन हो सकते हैं। जब चित्त बिल्कुल मूर्च्छित होता है, तब अगर कोई कल्पना बहुत गहरी मन में बैठी हो तो वह रूप लेने लगती है, और स्वप्न बन जाती है। लेकिन यह कोई सत्य का दर्शन नहीं है। सत्य के दर्शन के लिए विचार तो जाने चाहिए, लेकिन विवेक जगना चाहिए। इसलिए अविचार भी कोई मार्ग नहीं है, मात्र अविचार कर लेना, कोई मार्ग नहीं है। आप मूर्च्छित हो जाएंगे, बेहोश हो जाएंगे। बेहोशी से कुछ उपलब्धि नहीं है, जड़ता पैदा हो जाएगी। और इसलिए आपने देखा होगा, जितने लोग इस तरह के जप, इस तरह की एकाग्रताएं या कनसनट्रेशन करने के उपयोग करते हैं, ये सब तरकीबें अपने को मूर्च्छित करने की हैं। दुनिया से अपने को भुला देने की हैं। दुनिया की परेशानी भूल जाएगी अगर हम मूर्च्छित हो गए हैं, इसीलिए आदमी शराब पीता है और शराब पीने में और मंदिर जाकर प्रार्थना करने में बहुत फर्क नहीं है। बुनियाद में दोनों इनटाक्सिकेंट हैं। क्योंकि दोनों में ही आप अपने को भूल जाते हैं, दुनिया को भूल जाते हैं, भूल गए तो सोचा कि सब ठीक है।
वह शुतुरमुर्ग होता है रेगिस्तान में उसका कोई दुश्मन उस पर हमला कर दे, वह अपने सिर को रेत में खपा कर खड़ा हो जाता है। दुश्मन दिखाई नहीं पड़ता, वह शुतुरमुर्ग समझता है, दुश्मन नहीं है। जो नहीं दिखाई पड़ता, वह खत्म हो गया। अगर दुनिया का बोध मिट जाए तो हम समझते हैं कि दुनिया खत्म हो गई। अगर हमें चिंताएं भूल जाएं तो हम समझते हैं कि चिंताएं नष्ट हो गईं। लेकिन जैसे ही हम बाहर आएंगे, उसे नशे के, प्रार्थना के, भजन के, कीर्तन के; अब सारी दुनिया में यह है कि लोग झांझ मंजीरा पीट कर नाच रहे हैं, कूंद रहे हैं, नाचने-कूदने से, मंजीरा बजाने से, चिल्लाने से, ढोल पीटने से, धुआं करने से बेहोशी आती है। अगर एक बंद कमरे में बहुत धुआं कर दिया जाए, अगरबत्तियां जला दी जाएं, धूप जला दी जाएं, खूब ढोल बजाए जाएं और मंजीरे पीटे जाएं, घंटे बजाए जाएं, लोग नाचें, और कूदें, और चिल्लाएं थोड़ी देर में अपने आप मूर्च्छित हो जाएंगे। इस मूर्छा में, इस बेहोशी में वे समझेंगे कि कोई साक्षात हो रहा है, कोई सत्य मिल रहा है। ये सब बेवकूफियां बहुत प्रचलित हैं, लेकिन इनसे कोई, कोई सत्य को उपलब्ध नहीं होता, और न ही हो सकता है।
इसलिए अविचार भी कोई मार्ग नहीं है। न तो विचार कोई मार्ग है, न अविचार कोई मार्ग है। तो निश्चित ही फिर मुझसे पूछा जाएगा कि फिर मार्ग क्या है? निर्विचार होना मार्ग है। निर्विचार बड़ी अलग बात है, अविचार बड़ी अलग बात है। विचार दूसरों के होते हैं, उनको बंद कर दें और सो जाएं तो अविचार हो जाते हैं। विचार दूसरों के होते हैं, वे विलीन हो जाएं और आपका बोध परिपूर्ण सजग हो, मूर्च्छा न हो तो जो स्थिति होती है, वह निर्विचार होती है। वह निर्विचार सजगता की स्थिति होती है। वह थॉटलेस अवेयरनेस की स्थिति होती है। विचार तो कोई नहीं होता, लेकिन आप जगे हुए होते हैं। चित्त पर कोई विचार नहीं होता, लेकिन आप परिपूर्ण होश में होते हैं, बेहोश नहीं होते। आप जान रहे होते हैं।
एक मुसलमान फकीर और कवि हुआ, हफीस। हफीस का नाम शायद आपने सुना हो। शायद परसिया में उससे कीमती काव्य और किसी व्यक्ति ने नहीं लिखा है। और शायद उससे गहरी अनुभूति जमीन पर बहुत थोड़े लोगों को हुई होगी। तो हफीस अपने गुरु के पास था। उसके पास ध्यान सीखने गया था। और बहुत से लोग उसके गुरु के आश्रम पर थे जो ध्यान सीख रहे थे। एक अंधेरी अमावस की रात उसके गुरु ने कहा कि आज मेरे सारे शिष्य इकट्ठे हो जाएं और वे ध्यान को बैठें। आधी रात गए ध्यान शुरू हुआ, कोई घंटे-डेढ़ घंटे बाद, उसके गुरु ने, उसके गुरु ने कहा था उन लोगों से कि विचार को तोशांत कर लेना, लेकिन होश को सजग रखना।

सो मत जाना, क्योंकि सो जाना कोई ध्यान नहीं है। कोई घंटे-डेढ़ घंटे बाद जब उसने देखा कि अनेक शिष्यों के मुंह से अब तो खर्राटे निकलने शुरू हो गए हैं, स्नोरिंग शुरू हो गई है, तो उसने धीरे से कहाः हफीस। हफीस फौरन उठ कर आया। उसने कहाः क्या है? उसने कहाः कोई बात नहीं, जाओ फिर बैठ जाओ। उसके बाद उसने दूसरे शिष्य का नाम लिया, लेकिन उठ कर हफीस ही आया। उसके बाद उसने फिर थोड़ी देर बाद तीसरे शिष्य का नाम लिया, लेकिन उठ कर हफीस ही आया। ऐसा आधी रात बीतते धीरे-धीरे उसने दस-पंद्रह दफा, दस-पंद्रह लोगों को बुलाया। लेकिन जब आया तो हफीस ही आया क्योंकि बाकी सारे लोग तो सोए हुए थे। किसी का भी नाम लेता था, हफीस ही उठ कर आ जाता था। तो उसने कहाः बाकी सारे लोग तो सो गए, तुम अके ले जगे हुए हो, जगा हुआ होना, ध्यान में होना है। सो जाना ध्यान में होना नहीं है।
लेकिन जगे हुए रह कर अगर विचार कर रहे हैं तो फिर ध्यान में नहीं हैं। जगे हुए हैं और विचार नहीं कर रहे हैं। होश पूरा है और विचार कोई नहीं है। जैसे आकाश तो हो, लेकिन पक्षी कोई भी न उड़ता हो। आकाश तो हो, बदलियां बिल्कुल भी न हों; ऐसा ही होश तो हो, लेकिन होश पर विचार के कोई बादल न हों। विचार के कोई पक्षी न उड़ते हों। तो उस घड़ी में, उस घड़ी में, जब कि होश तो है और विचार कोई नहीं है, जीवन में एक परिवर्तन आना शुरू होता है, हम उस सत्ता के प्रति जागने शुरू होते हैं, जिसका नाम आत्मा है। या उस सत्ता को हम जानना शुरू करते हैं जिसका नाम परमात्मा है। हम स्वयं के आंतरिक प्राणों में प्रवेश करने में समर्थ हो जाते हैं। विचार हमें सतह पर रोके रखते हैं। विचार के छोड़ देने से भीतर गहराई आती है। लेकिन अगर विचार छूट जाएं और साथ ही होश भी छूट जाए तो गहराई तो जरूर आती है, लेकिन हम मूर्च्छित होते हैं। इसलिए गहराई का अनुभव नहीं हो पाता। नींद के गहरे क्षण में आप वहीं जाते हैं, जहां योगी समाधि में जाता है। कोई भेद नहीं है।
जब आप बहुत गहरी नींद में हैं, तब आप वहीं जाते हैं, जहां योगी समाधि
में जाता है। जहां ध्यानी ध्यान में जाता है। लेकिन आपको, आपकी नींद में और समाधि में बड़ा फर्क दिखाई पड़ेगा। नींद में आप मूर्च्छित होते हैं और समाधि में आप जाग्रत होते हैं। फर्क ऐसे ही है, जैसे हम एक आदमी को क्लोरोफार्म की हालत में एक बहुत सुंदर बगीचे में लाएं और वापस ले जाएं और एक आदमी जागा हुआ बगीचे में आए और वापस लौटे। दोनों ही बगीचे में आए, दोनों ही फूल के करीब से गुजरे, दोनों को सुगंध उनकी नाकों को छुई और स्पर्श किया, ठंडी हवाओं ने उनके शरीर को छुआ, लेकिन दोनों को बहुत बड़ा फर्क पड़ जाएगा। एक जो मूर्च्छित आया था, मूर्च्छित गया। उसने कुछ भी जाना नहीं और जो होश में आया था और होश में गया, उसने बहुत कु छ जाना। और ज्ञान जीवन को बदल देता है। नींद में हर व्यक्ति वहीं पहुंचता है, जहां समाधि में योगी पहुंचता है। लेकिन हम वहीं जाकर बेहोश होते हैं, वापस लौट आते हैं और हमें अनुभव नहीं हो पाता कि हम कहां गए? बहुत गहरी नींद में आप अपने केंद्र पर पहुंच जाते हैं, जब स्वप्न भी नहीं चल रहे होते, तब आप अपने केंद्र पर पहुंच जाते हैं। लेकिन हमें उसका कोई पता नहीं चलता।
वहीं पहुंचना है होशपूर्वक, वहीं पहुंचना है जाग्रत रहकर। वहीं पहुंचना है सजग रहकर। वहीं पहुंचना है पूरे सचेतन। और सचेतन रूप से वहां पहुंचा जा सकता है। और पहुंचने का मार्ग है। द्वार निर्विचार सजगता है। निर्विचार सजगता द्वार है। न तो विचार द्वार है, न अविचार द्वार है; द्वार है निर्विचार सजगता। परिपूर्ण होश से लेकिन परिपूर्ण शून्य रह कर, जो खड़ा हो जाता है, वह द्वार पर खड़ा हो जाता है।
पुरानी कथा है, श्वेतकेतु गया था गुरुओं के आश्रम में ब्रह्म की खोज में। उपनिषदों के समय की बात है। वह गया एक ऋषि के आश्रम में गया और उसने कहाः मैं ब्रह्म को जानने आया हूं। उसके गुरु ने कहाः सच में ही तुझे ब्रह्म जानना है तो यहां गुरु के आश्रम में आने की क्या जरूरत थी? अगर ब्रह्म जानना है तो यहां गुरु के आश्रम में आने की क्या जरूरत थी? यहां तो हम विचार सिखाते हैं, शास्त्र सिखाते हैं। उसने कहाः फिर मैं कहां जाऊं? उसके गुरु ने कहाः तू ऐसा कर अगर तेरी हिम्मत है, अगर तेरा साहस है, अगर तू जीवन लगाने को राजी है तो इस आश्रम की चार सौ गऊएं हैं, उन्हें तू ले जा। और

दूर जंगल में चले जाना। इतने दूर जहां कोई मनुष्य न हो। और जहां मनुष्य की कोई आवाज और विचार न पहुंचता हो। और जब ये गऊओं को लेकर तू वहां रहे, तो एक ही काम करना, गऊंओं की सेवा करना, होशपूर्वक रहना, और विचार मत करना। जब ये गऊवें चार सौ की हजार हो जाएं, इनके बच्चे हों और ये हजार की संख्या पर पहुंच जाएं, तब तू वापस लौट आना। श्वेतकेतु ने कहाः मैं जाता हूं। वह उन गऊओं को लेकर, चार सौ गऊओं को लेकर, अब वह कब हजार होंगी कुछ नहीं कहा जा सकता, कितनी उनमें से मर जाएंगी, कितने बच्चे बचेंगे, क्या होगा? कितने वर्षों में वे हजार हो पाएंगी? उसका कुछ पता नहीं है। वह युवक उन गऊओं को लकर वन में चला गया। बहुत दूर वन में चला गया जहां कोई मनुष्य नहीं, मनुष्य का कोई विचार नहीं, गऊएं थीं और वह था। थोड़े दिन पुराने विचार मन को आते रहे होंगे, घर के, परिवार के, सुने हुए, समझे हुए, लेकिन अगर विचार को नया भोजन न मिले तो पुराने विचार बहुत जल्दी घिस-पिट कर नष्ट हो जाते हैं। जैसे पुराने सिक्के चलते-चलते खराब होकर व्यर्थ हो जाते हैं, लेकिन नये सिक्के उनकी जगह भर देते हैं और सिक्के हमेशा चलते रहते हैं, वैसे ही चित्त में पुराने विचार तो घिस-घिस कर नष्ट होते जाते हैं, लेकिन नये उनकी जगह लेते जाते हैं।
आप जरा ख्याल करें, दस साल पहले जो विचार आपके भीतर चलते थे, अब नहीं चलते होंगे। कल जो विचार चलते थे, वे आज नहीं चल रहे हैं। लेकिन पुराने तो हट जाते हैं, नये आ जाते हैं। वह युवक वहां चला गया, उसने नये विचार का पोषण नहीं किया। चुपचाप था, काम ऐसा था उसमें बहुत विचार की जरूरत न थी। सेवा करता था गऊओं की, चुपचाप पड़ा रहता था, तारे देखता था, सूरज देखता था, दरख्त देखता था, झरनों पर नहा लेता था, सो जाता था। गऊओं की सेवा करता था, उन्हीं के बीच टिक कर, उन पर ही सिर टेक कर रात को विश्राम कर लेता था। वर्ष आए, माह आए, दिन आए और गए, धीरे-धीरे उसके विचार शांत हो गए। धीरे-धीरे विचार तो क्रमशः गिर गए, विचार तो विलीन हो गए, लेकिन बोध पूरा था। काम करता था, सजग था। चौबीस घंटे जागा हुआ था। अपना होश रखता था। कितने वर्ष बीत गए कुछ पता नहीं, जब गऊएं हजार हो गईं।
कहानी बहुत मीठी है। कहानी है कि वह तो संख्या ही भूल गया। क्योंकि जो विचार भूल गया, उसे संख्या कैसे याद रहेगी? वह संख्या भूल गया तो उसे ख्याल ही नहीं रहा कि गऊएं कब हजार हो गईं। तो कहानी कहती है कि उन गऊओं ने इकट्ठे होकर कहाः श्वेतकेतु, अब तो हम हजार हो गए। अब हमें वापस ले चलो। गुरु आश्रम वापस लौट चलो। तो वह गुरु आश्रम वापस लौटा। जब दूर ही गांव के बाहर वे हजार गऊएं आने लगीं और उनकी काठ की घंटियां बजने लगीं और धूल उठने लगी और उन हजार गऊओं का गांव में प्रवेश हुआ तो सारे गांव में खबर फैल गई कि श्वेतकेतु लौटता है। हजार गऊएं लौटती हैं। उनकी घंटियां बजती हैं। सारे आश्रम के लोग बाहर इकट्ठे हो गए। उस आश्रम के गुरु ने कहाः हजार? एक हजार एक गऊएं लौट रही हैं। उसके गुरु ने कहाः एक हजार नहीं, एक हजार एक गऊएं लौट रही हैं। जो उनके बीच लौट रहा है श्वेतकेतु, अब वह मनुष्य कहां रहा, अब वह भी गऊओं जैसा ही सरल और शांत हो गया। और सच में लोगों ने देखा कि एक हजार एक गऊएं लौट रही हैं। क्योंकि श्वेतकेतु मनुष्य जैसा नहीं लौट रहा, उनके बीच गऊओं जैसे ही लौट रहा है। गऊएं उसे धक्के दे रही हैं। वह उन्हीं के बीच चला आ रहा है, उसी भीड़ में। और उसके गुरु ने अपने शिष्यों को कहाः देखते हो, ब्रह्मज्ञानी कैसा होता है। वह ब्रह्म को पाकर लौट रहा है। लेकिन उन शिष्यों ने कहाः इसको ब्रह्म किसने सिखाया होगा? तो उसके गुरु ने कहाः ब्रह्म क्या कभी सिखाया जाता है, जो सिखाया जा सकता है वह ब्रह्म नहीं हो सकता। जो सिखाया जा सकता है वह सत्य नहीं हो सकता। यह सीख कर नहीं लौट रहा है, यह जान कर लौट रहा है। सीखना दूसरों से होता है, जानना स्वयं होता है। इसने खुद अपने प्राण उघाड़े और जाना। उसके शिष्यों ने पूछाः यह किसलिए लौट रहा है अब? तो उन्होंने कहाः केवल शायद मुझे धन्यवाद देने आता होगा।
वह आया और उसने गुरु के पैर छुए और धन्यवाद दिया। तो गुरु ने कहाः मुझे किस बात का धन्यवाद देते हो, क्योंकि जाना तो तुमने है। बहुत अदभुत बात है। श्वेतकेतु ने कहा--आपने मुझे ब्रह्म के बाबत कुछ न बता कर जो कृपा

की उसका धन्यवाद देता हूं। क्योंकि अगर ब्रह्म के संबंध में जान लेता तोशायद ब्रह्म को जानना संभव नहीं हो पाता। सब "जानना" जब छूटा तब मैंने जो जाना वही ब्रह्म है। जो सब जानने से मुक्त हो जाता है तब जो जानता है, वही सत्य है। श्वेतकेतु ने जाग कर और शून्य होकर सत्य को जाना और अब तक जगत में जिन्होंने भी जाना है उन्होंने जाग कर और शून्य होकर जाना है। भीतर परिपूर्ण सजगज्योंति जलती रहे विवेक की और विचार का धुआं बिल्कुल न हो। विचार का धुआं न हो और विवेक की ज्योति हो तो जो जाना जाएगा वही सत्य है।
उसे जानने को न तो विचार है और न अविचार हैं।
इसलिए न तो विचार को संग्रह करना है जैसा पंडित करता है। न विचार को मूर्च्छित करना है जैसा बहुत से तथाकथित साधु और संन्यासी करते हैं।
विचार को जाने देना है और विवेक को आने देना है। विवेक हमारा स्वरूप है।
विचार हम पर आक्रमण है बाहर का। विचार विजातीय है--फॉरेन है। विवेक हमारा स्वरूप है। विवेक जगना चाहिए और विचार जाना चाहिए। द्वार पर आप पहुंच जाएंगे। कैसे विवेक जागेगा, उसकी हम कल चर्चा करेंगे। क्योंकि वही प्रवेश है।
चार हिस्सों में मैंने चर्चा को रखा--आकांक्षा, मार्ग, द्वार और प्रवेश। द्वार है विचार शून्य हो और सजगतापूर्ण हो। होश पूरा हो और विचार कोई न रह जाए तो आप द्वार पर खड़े हो गए। और प्रवेश कैसे होगा, वह सजगता पूर्ण कैसे होगी, सउकी चर्चा हम कल करेंगे। कल हम विचार करेंगे, कैसे सजगता पूरी हो सकती है और कैसे प्रवेश हो सकता है। प्रवेश के अतिरिक्त परमात्मा में कभी पूरा पहुंचना नहीं होता। असल में प्रवेश ही पहुंचना है। लोग कहें कि हम परमात्मा को पा लिए हैं तो गलती हो जाएगी। पा लेने का अर्थ हुआ कि परमात्मा कोई छोटी सीमित चीज है कि आपने उसको पा लिया। कोई सागर कभी पाता है? सागर में कूदता भर है, प्रवेश भर करता है। सागर को पाया नहीं जा सकत। हां, मटकी भर पानी हो तो उसको पाया जा सकता है। सागर को नहीं पाया जा सकता। फिर सागर, फिर भी छोटा ही है। उसकी सीमा है। परमात्मा को कभी पाया नहीं जा सकता। उसको कभी पजेस नहीं किया जा सकता। इसलिए परमात्मा में प्रवेश ही होता है। या समझ लें कि प्रवेश ही पाना है। परमात्मा पर कभी अधिकार नहीं होता कि कोई आदमी कहे कि मैंने परमात्मा को पा लिया। अगर कोई कभी ऐसा कहे तो समझना कि परमात्मा से इसका दूर का भी कोई संबंध नहीं है। परमात्मा में सिर्फ प्रवेश होना है। जैसे बूंद सागर में गिरती है वैसे ही व्यक्ति की चेतना परमात्मा की चेतना में गिर जाती है। यही पाना है। यही प्रवेश है। इसलिए मैं अंतिम चरण में प्रवेश की बात करूंगा। उपलब्धि की बात नहीं करूंगा। उपलब्धि का अर्थ बहुत छोटा होता है। चीजें पाई जा सकती हैं--परमात्मा में तो केवल प्रवेश होता है। कोई प्रेम को कभी नहीं पाता। प्रेम में प्रवेश करता है। और कितना ही प्रवेश करता जाए प्रेम की और नई-नई, दिशाएं खुलती चली जाती हैं। परमात्मा में कोई कितना ही प्रवेश करता जाए, तब भी पाता है कि जो प्रवेश किया वह कम--जोशेष है वह बहुत ज्यादा है। इसी अर्थों में परमात्मा अनंत है। अनंत का अर्थ है--उसमें प्रवेश ही प्रवेश है। उपलब्धि पूरी कभी नहीं है। उपलब्धि केवल उसी की पूरी होती है जिसकी कोई सीमा हो। जो कहीं समाप्त हो जाता है। इसलिए परमात्मा कभी उपलब्ध नहीं होता है। परमात्मा में केवल प्रवेश होता है। उस प्रवेश की हम कल चर्चा करेंगे।
आज मैंने जो कहा है, निर्विचार सजगता थाटलेस अवेयरनेस या कंटेंटलेस, कांशसनेस। कोई कंटेंट न हो। कोई विचार न हो। मात्र चेतना रह जाए--यह द्वार है। वह चेतना कैसे रह जाए उस पर हम कल विचार करेंगे।

मेरी बातों को प्रेम से सुन रहे हैं--समझने की कोशिश कर रहे हैं। आशा करता हूं कि शायद कोई बात आपकी समझ का हिस्सा बन जाए तो आप एक दूसरे व्यक्ति हो सकते हैं। मेरे धन्यवाद को स्वीकार करें। सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन की खोज
चौथा प्रवचन

प्रवेश

मेरे प्रिय आत्मन्!
सत्य के संबंध में, परमात्मा के प्रेम के संबंध में कुछ बीज आपके भीतर
बो सकूं, कोई प्यास आपके भीतर जग जाए, कोई असंतोष आपके भीतर पैदा हो जाए, इसकी चेष्टा करता हूं। संतोष के लिए नहीं, असंतोष आपके भीतर पैदा हो, इसका प्रयास करता हूं। आप अशांत हो जाएं परमात्मा के लिए, सत्य के लिए एक, एक लपट की भांति, आग की भांति आपके भीतर कोई अभीप्सा चलने लगे। जो असंतुष्ट होता है, वह कभी संतुष्ट भी हो जाता है। लेकिन जो कभी असंतुष्ट ही नहीं होता, उसके संतोष के द्वार सदा के लिए बंद हैं। और जो प्यासा होता है उसे कभी पानी भी मिल जाता है और जो प्यासा ही नहीं होता वह पानी से सदा को वंचित रह जाता है। इन चार दिनों में उसी प्यास के संबंध में थोड़ी सी बातें कहीं हैं।
पहले दिन मैंने प्यास के संबंध में ही कुछ कहा। और धन्य मानता हूं उन लोगों को जिनके जीवन में किसी न किसी भांति की प्यास सत्य के लिए है। कोई अंकुर जिनके भीतर हैं। और जो चौबीस घंटे चाहे कुछ भी करते हों, लेकिन उस करने से तृप्त नहीं हैं। और चाहे कहीं भी हों, जीवन में कैसे भी हों, उनके भीतर कहीं कोई बात सरकती रहती है। कोई आंदोलन उनके मन के भीतर चलता रहता है और उन्हें लगता है कि जो है वह तृप्त होने जैसा नहीं है। कुछ और पाने जैसी बात भी है। यह प्यास जीवन के दुख और जीवन के वास्तविक स्वरूप को मृत्यु के भांत देखने की तरह पैदा होती है, वह मैंने आपसे कहा। उसके बाद हमने मार्ग पर विचार किया कि किस भांति हम इस प्यास के बाद आगे बढ़ सकते हैं? मैंने कहा कि न विश्वास, न अविश्वास, बल्कि दोनों से मुक्ति और दोनों से स्वतंत्र चित्त सत्य को जानने में समर्थ होता है।
फिर हमने द्वार के संबंध में विचार किया। न विचार से और न अविचार से बल्कि निर्विचार से। निर्विचार सजगता से मनुष्य को कोई पहुंच उपलब्ध होती है। मनुष्य कहीं पाता है कि पहुंचा। उसके जीवन में कोई नये आलोक के और आनंद के दर्शन होते हैं। उसका हमने विचार किया। आज अंतिम दिन प्रवेश के संबंध में आपसे कुछ थोड़ी सी बात कहनी है। बहुत ही पवित्रतम क्षेत्र है जहां हम प्रवेश करना चाहते हैं। बहुत ही पवित्रतम क्षेत्र है प्रवेश का, प्रभु के निकट जहां हम पहुंचना चाहते हैं। बहुत ही शांति से, बहुत सरलता से समझने का है। जैसा मैंने कल कहा, सजगता हो और विचार न हों। यही साधना है। या तो विचार होते हैं, सजगता नहीं होती, और या विचार नहीं होते हैं तो फिर मूर्च्छा हो जाती है। इन दोनों स्थितियों में चित्त बंधा है। इन दोनों के बाहर उठना जरूरी है और जो बाहर उठ सकता है, वही ध्यान को पाता है। कैसे हम बाहर उठेंगे? सामान्यतया जो भी उपक्रम किए जाते हैं, वे बाहर नहीं ले जाते, बल्कि और बंद कर देते हैं। और जकड़ देते हैं और बंधन से बांध देते हैं। सम्यक प्रयोग जीवन के भीतर जागरण लाने का क्या हो? क्या हम राम-नाम का जप करें? मालाएं जपें? शास्त्रों को पढ़ें? मैंने पीछे चर्चाओं में कहा कि इनसे कुछ भी नहीं होगा। मैंने यह भी कहा कि बहुत से रास्ते हैं जिनसे हम अपने को मूर्च्छित कर लेते हैं, बेहोश कर लेते हैं; किसी भांति इंटाक्सिकेंट कर लेते हैं, और फिर उन्हीं में अपने जीवन को गंवा देते हैं। उनसे भी कुछ नहीं होगा। होगा जीवन की समस्त क्रियाओं के प्रति सतत जागरूकता लाने से। जैसा मैंने कहा कि जिस ओर हमारा ध्यान जाएगा, उसी ओर हम जाग जाते हैं। अगर जीवन की समस्त क्रियाओं के प्रति हमारा ध्यान हो तो एक अदभुत जागरण हमारे भीतर पैदा होना शुरू हो जाएगा।
कल दोपहर एक बजे मैं किसी की प्रतीक्षा कर रहा था। तो मैं पड़ा रहा, चूंकि प्रतीक्षा थी, इसलिए द्वार पर छोटा सा भी खटका हुआ, किसी के पैर की आवाज आई तो मैं जागा हुआ था, उसका मुझे बोध था। वैसे मुझे कोई बोध नहीं होता है। लेकिन चूंकि प्रतीक्षा थी, इसलिए छोटा सा भी खटका हुआ, दरवाजे पर कोई हिला, किसी ने कोई बात की, सीढ़ियों पर कोई चला, तो मुझे वह सब सुनाई पड़

रहा था। मेरे बोध में था। बोध में था तो मुझे ज्ञात हो रहा था। अगर मेरा बोध उस तरफ नहीं होता तो मुझे ज्ञात नहीं होता। इसलिए मैंने कहा कि ध्यान की धारा, जिस और हो वहां हमारा बोध जग जाता है। अगर ध्यान की धारा जीवन के समस्त क्षणों में जाग जाए तो हमें आत्म बोध पैदा हो जाता है। अगर खंडित रूप से ध्यान की धारा किसी तरफ जगे तो हमें पर-बोध होता है, अगर अखंड रूप से ध्यान की धारा जग जाए तो हमें स्वयं बोध हो जाता है।
एक छोटी सी कहानी से अपनी चर्चा को मैं शुरू करूं।
उससे आपको समझ में आ सके कि मेरा बोध से, ध्यान से क्या अर्थ और क्या प्रयोजन है? वहां पूरब के मुल्कों में विशेषकर जापान में, तलवार चलाना और तलवार चलाने की कुशलता सीखने के लिए विद्यालय होते हैं। कभी हमारे मुल्क में भी होते थे। उन विद्यालयों पर लिखा होता हैः हाउस ऑफ गॉड। यह बिल्कुल ही पागलपन की बात है। जहां तलवार चलाना सिखाते हैं वहां विद्यालय पर लिखे रहते हैं, ईश्वर का घर, परमात्मा का मंदिर। हमको भी हैरानी होगी कि अंदर तलवार चलाना सिखाते हैं और बाहर दरवाजे पर लिखे रहते हैं, ईश्वर का घर। लेकिन मैं आपसे कहूं, अगर कोई तलवार चलाना ठीक से सीख जाए तो ईश्वर के घर के करीब पहुंच जाता है। क्यों पहुंच जाता है? क्योंकि तलवार चलाने वाले को बड़ा होश रखना पड़ता है। और अगर होश पूरा-पूरा जग जाए तो तलवार चलानी भी आ जाती है, और ईश्वर की तरफ पहुंचने का रास्ता भी बन जाता है। इसलिए उन लोगों ने तलवार चलाने वाले घरों के ऊ पर लिखा हुआ हैः हाउस ऑफ गॉड।
एक ऐसे ही प्रभु के मंदिर में जहां तलवार सिखाई जाती थी, एक नया युवक जाकर दीक्षित होना चाहता था, वह गया। उस समय का जो बहुत बड़ा गुरु था तलवार सिखाने वाला, उसके पास गया और कहा कि मैं दीक्षित होना चाहता हूं और मुझे भी यह कला सीखनी है। उसके गरु ने कहाः कितने दिन मेरे यहां रुक सकोगे? उस व्यक्ति ने कहाः बहुत जल्दी है मुझे, बहुत से बहुत वर्ष भर रुक सकता हूं। तो उस आदमी ने, उसके गुरु ने कहा कि वापस लौट जाओ, कोई छोटा-मोटा काम सीखो, तलवार चलाना बड़ा काम है, जन्म-जन्म लग जाते हैं और फिर यह कोई तलवार चलाना छोटी-मोटी बात नहीं है। हम तो तलवार चलाने से ही परमात्मा में प्रवेश भी सिखाते हैं। इसलिए जन्मों की प्रतीक्षा और धीरज लेकर आओ तो सीख सकते हो। इतने जल्दी नहीं होगा। उस युवक ने कहाः कितना समय लगेगा? फिर गुरु ने कहाः समय की कोई बात ही नहीं है, एक क्षण में भी हो सकता है और जन्म भी लग सकते हैं। तुम्हारे ऊपर निर्भर है कि तुम बोध को कितनी तीव्रता से जगाते हो? उसने कहा कि मैं रुकूंगा, जब तक चाहेंगे रुकूंगा। उसके गुरु ने कहाः स्मरण रखो, अगर धीरज पक्का है तो दुबारा मुझसे मत कहना कि अब तलवार चलाना सिखाओ। जब मेरी मर्जी होगी तब शुरू करूंगा। ऐसा वर्ष बीत गया। एक वर्ष उसने कहा था सीख लूं। वर्ष बीत गया। और उसके गुरु ने कहाः तुम घर में कचरा झाड़ो, दीवालें साफ करो, पानी लाओ, गाय का दूध दोहो, ये सारे काम करो। जब जरूरत होगी मैं तुम्हारा पाठ शुरू करूंगा।
एक वर्ष बीतना हो गया, उसका कोई पाठ शुरू नहीं हुआ। वह कचरा ढोता था,
घर साफ करता था और छोटे-मोटे काम करता था। गुरु का उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं था। दूसरे लोगों की तरफ ध्यान था। वह बहुत हैरान हुआ। ऐसे तो जन्म-जन्मों गुजर जाएंगे और कुछ भी सीखने को नहीं मिलेगा। लेकिन एक दिन वह कचरा बुहारी से साफ कर रहा था और पीछे से गुरु ने आकर एक लकड़ी की तलवार से उसके ऊपर हमला किया। पीछे से एकदम से हमला किया वह घबरा गया और चौंक कर खड़ा हो गया। उसने कहा यह क्या करते हैं? उसके गुरु ने कहा पाठ शुरू किया। अब ध्यान रखना, मैं कभी भी हमला कर सकता हूं। तुम कोई भी काम करोगे, मैं कभी भी हमला कर सकता हूं। और फिर हमले होने शुरू हो गए, वह रोटी बना रहा है, और पीछे से आकर गुरु उस पर लकड़ी की तलवार से हमला कर देगा। वह कचरा झाड़ रहा है, पीछे से हमला हो जाएगा। वह सो रहा है, हमला हो जाएगा। चौबीस घंटे कहीं से भी हमला हो सकता है। क्या हुआ उसके भीतर? उसके हाथ में कोई तलवार नहीं है। बचने का कोई उपाय नहीं है, उसने कहा कि मुझे भी तलवार दें। गुरु ने कहाः अभी तलवार क्या करोगे? पहले बोध आ जाए तो तलवार काम की होगी।
जरा कल्पना करें, अगर आपके पीछे कोई इस तरह की स्थिति हो कि आप सो रहे हैं कोई हमला कर दे, आप खाना बना रहे हैं, कोई हमला कर दे; आप खाना खा रहे

हैं, कोई हमला कर दे। चौबीस घंटे वह सजग रहने लगा। चौबीस घंटे उसे बोध रहने लगा कि हमला होता है। किसी भी क्षण हमला हो सकता है, ऐसे दिन बीतने लगे। उसके भीतर एक नयी चेतना की स्थिति बनने लगी। उसका ध्यान पूरे वक्त इस बात पर रहने लगा कि हमला होने को है। धीरे-धीरे यह हुआ कि हमला गुरु कर रहा है और वह एकदम चौंक कर खड़ा हो जाएगा। अभी हमला हुआ नहीं, वह इस तरफ देख रहा है, पीछे हमला होने को है और वह सजग हो जाएगा, और चौंक कर खड़ा हो जाएगा। गुरु प्रसन्न हुआ और उसने कहा कि कुछ पाठ में गति हो रही है। तीन वर्ष बीतते- बीतते यह हालत हो गई कि वह ऐसे बैठा हुआ है, हमला होगा तो वह हाथ पहले से बढ़ा देगा। तीन वर्ष बीतते-बीतते बोध ऐसा सजग हुआ कि अब उसे हर वक्त बोध है कि क्या हो सकता है? वह एकदम जागा हुआ है। उसका होश है। क्योंकि जो लोग तलवार की कला में कुशल होते हैं, यह नहीं कहा जा सकता कि दूसरा तलवार मारने वाला कहां तलवार मारेगा? उसकी तलवार मारने के पहले आपकी तलवार पहुंच जानी चाहिए बचाने को, नहीं तो आप बच नहीं सकेंगे। जब कोई तलवार से लड़ता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि तलवार का हमला कहां होगा? और अगर उस हमले के पहले आपका बचाव नहीं है, तो आप फिर नहीं बच सकते। हमले के पहले बचाव का मतलब हुआ बोध इतना तीव्र होना चाहिए कि उसके भीतर इच्छा पैदा हो कि हमला करे और आपके भीतर इच्छा का अनुभव हो जाए कि हमला कहां होने को है। नहीं तो कोई तलवार चलानी नहीं सीख सकता।
तो उसे बोध, उसे सजगता, उसने तीन वर्षों के बाद सोचा कि मैं तो मुझे तो इतना परेशान किया जा रहा है, वह नींद में भी उसका होश रहने लगा। नींद में भी गुरु हमला करता था तो वह एकदम चौंक कर बैठ जाता था। उसने कहा मैं भी तो देखूं, यह बूढ़ा मुझे परेशान कर रहा है, इसका बोध कैसा है? तीन वर्ष पूरे होने पर, गुरु लेटा हुआ था एक दिन, सुबह कोई पांच बजे होंगे। वह गया और उसने हमला किया गुरु पर। वह अपना... अपनी लकड़ी उसने हाथ में उठाई, उसके गुरु ने आंखें बंद ही किए कहा, ठहरो, बहुत हैरान हो गया। उसने कहा कि यह क्या, अभी तो आप आंख बंद किए हुए पड़े हैं। गुरु ने कहा कि अगर बोध बहुत सजग हो, तो तुम्हारे भीतर जो विचार की भी थिरकन होती है, वह भी पकड़ में आ जाती है। अगर बोध बहुत सजग हो तो दूसरे के भीतर जो विचार सरकता है, उसकी पदध्वनि भी सुनी जाती है। अगर बोध बहुत सजग हो तो दूसरे के भीतर जो भाव की लहर चंचल होती है, उसकी प्रतिध्वनि भी आ जाती है।
बोध पर सब निर्भर है। बोध का अर्थ क्या हुआ? बोध का अर्थ हुआ सतत जागा हुआ होना। हम तो सारे लोग सोए हुए हैं, वह युवा जाग गया। उसने गुरु से कहाः अब तलवार चलाना कब सीखूंगा? उसने कहाः अब तुम जाओ, तुम सीख गए। एक पाठ नहीं दिया तलवार चलाने का। और कहाः तुम जाओ, तुम सीख गए। अब तुम्हे तलवार चला कर कोई पराजित नहीं कर सकता। अब तुम्हारा बोध सजग है। और यही जीवन की कला भी है, अगर बोध सजग है तो जीवन में कोई पराजय नहीं है। और अगर बोध सजग नहीं है तो जीवन पराजित हो ही जाएगा।
हम सोए हुए जीते हैं। हम करीब-करीब सोए हुए हैं। इसको आप ख्याल करें
और अनुभव करें कि आप करीब-करीब सोए हुए जीते हैं--जब आप खाना खा रहे हैं तो आप बोधपूर्वक खा रहे हैं? आपको बोध है कि आप भोजन ले रहे हैं? जब आप रास्ते पर चल रहे हैं तो आप बोधपूर्वक चल रहे हैं? आपको पता है कि आप चल रहे हैं? जब आप बिस्तर पर सोने गए हैं तो आप बोधपूर्वक सो रहे हैं? आपको ज्ञात है कि आप सो रहे हैं? या कि आप एक नशे में, एक सोए हुए आदमी की तरह कुछ कर रहे हैं और मन कहीं और है?
जिसका मन करने में नहीं है और करने के कहीं और है, वह सोया हुआ आदमी है।
सोए हुए होने का अर्थ क्या है? सोए हुए होने का अर्थ हैः हम जहां हैं वहां हमारा बोध नहीं है, तो हम सोए हुए हैं। हम जहां हैं वहां हमारा बोध न हो, तो हम सोए हुए लोग हैं। और हमारा मन ऐसा है कि जहां हम होते हैं वहां वह कभी नहीं होता। या तो मन अतीत में होता है, जो बीत गए क्षण, घटनाएं, स्मृतियां, मन वहां घूमता रहता है। और या मन भविष्य में होता है, कल्पनाओं में, जो होने वाला है, उसकी इच्छाओं में। जो मोमेंट, जो क्षण मौजूद है, वह जो प्रेजेंट मोमेंट है उसमें मन कभी नहीं होता। हम वर्तमान में कभी होते

ही नहीं हैं। या तो अतीत में होते हैं या भविष्य में होते हैं। और जो वर्तमान में नहीं है, वह सोया हुआ है। क्योंकि जीवन तो वर्तमान में है। सब जीवन वर्तमान में है, न तो अतीत की कोई सत्ता है, न भविष्य की कोई सत्ता है। अतीत जा चुका, भविष्य अभी आया नहीं। जो मौजूद है, जो खड़ा है निकट, वह जो वर्तमान की पतली सी क्षण की लकीर खड़ी है, उसमें आप हैं। अगर उसमें आप नहीं हैं तो आप सोए हुए मनुष्य हैं। फिर यह सोया हुआ मनुष्य जिसका बोध अतीत या भविष्य में है, वर्तमान में जो भी करेगा, वह गलत हो जाएगा, वह असम्यक हो जाएगा। क्योंकि सोया हुआ मनुष्य ठीक कैसे कर सकता है? वह जो भी करेगा वहीं भूल हो जाएगी। मुझसे पूछिए तो सोए हुए कोई भी काम करने का नाम मैं पाप कहता हूं। जिस काम को भी हम सोए हुए करते हैं वही पाप है। मैं यह नहीं कहता कि हिंसा पाप है, मैं यह नहीं कहता कि क्रोध पाप है, मैं यह नहीं कहता कि हत्या पाप है, मैं यह नहीं कहता कि चोरी पाप है; मैं कहता हूं कि जो काम भी सोया हुआ किया जाता है वह पाप है। और आप हैरान हो जाएंगे, जिन-जिन को हमने पाप कहा है, उनको करने के लिए सोया होना बिल्कुल जरूरी है। आप बिना सोए हुए किसी की हत्या नहीं कर सकते। और आप बिना सोए हुए चोरी भी नहीं कर सकते। और आप बिना सोए हुए झूठ भी नहीं बोल सकते। और बिना सोए हुए क्रोध भी नहीं कर सकते। सोया होना, पाप का मूल और उसकी जड़ है। सारी भ्रांति वहीं से खड़ी होती है। जब मुझसे कोई पूछता है पुण्य क्या है? तो मैं कहता हूं, जागा हुआ कर्म। जो आप जाग कर करते हैं, परिपूर्ण होश से करते हैं, वर्तमान में होकर करते हैं, वही कर्म पुण्य हो जाता है।
हमारे भीतर सतत निद्रा हमें घेरे हुए है। एक धुंधला सा मन है भीतर जो मुश्किल से कभी क्षण दो क्षण को जागता है और फिर सो जाता है। हम जीवन भर सोकर बिता देते हैं। इस सोए हुए पन को तोड़ देना होगा। यह मूर्च्छा को तोड़ देना होगा। यह मूर्च्छा कैसे टूटेगी? यह मूर्च्छा कोई प्रार्थना करेंगे तो और नींद गहरी हो जाएगी। कोई भजन-कीर्तन करेंगे तो और नींद गहरी हो जाएगी। किसी मंदिर में चले जाएंगे तो और नींद गहरी हो जाएगी। किन्हीं शास्त्रों को याद कर लेंगे तो और नींद गहरी हो जाएगी। यह मूर्च्छा उनसे नहीं टूटेगी। यह मूर्च्छा तो टूटेगी, चौबीस घंटे जो कर्म आप कर रहे हैं, उन कर्मों को बोधपूर्वक करने से। छोटे-छोटे कर्म को यदि बोधपूर्वक किया जाए, तो प्रत्येक कर्म के साथ आपके भीतर नये अवेयरनेस का, होश का, कांशसनेस का जन्म होना शुरू हो जाएगा। अभी आप यहां बैठे हैं, मैं आऊं और आपकी गर्दन पर जोर से एक तलवार रख दूं, तो उस वक्त आप विचार करिएगा? भविष्य में जाइएगा कि अतीत में जाइएगा? उस वक्त एक वर्तमान का क्षण भर रह जाएगा। एक सेकेंड को आप जाग कर वर्तमान में हो जाएंगे।
मेरे गांव के पास एक छोटी सी पहाड़ी है, छोटी सी पहाड़ी है, और छोटी सी नदी है। पहाड़ी का एक किनारा बहुत ऊंचा है। और किनारा सीधा सपाट है, उससे अगर कोई गिर जाए तो प्राण ही निकल जाएं। उस पर छोटी सी पतली पगडंडी है, उस पर चलना भी बड़ा कठिन है। छोटी सी कगार है, जब मुझसे कोई पूछता है कि बोध क्या है? तो मैं उसे पकड़ कर वहां ले जाता हूं। और उससे कहता हूं, इस कगार पर चलो। उसके साथ मैं भी चलता हूं और उससे कहता हूं, इस कगार पर चलो। उसके पैर डगमगाने लगते हैं, मैं कहता हूं कि तुम चले आओ। यहां तुम बिना बोध के नहीं चल सकते, तुम्हारे भीतर जो फर्क हो समझ लेना कि वह बोध है। वहां वह एकदम सजग हो जाता है। सारे विचार बंद हो जाते हैं। एक ही विचार होता है कि एक-एक कदम सम्हाल कर, सारा होश उसका पैरों में केंद्रित हो जाता है। सारा होश उसका पैरों में केंद्रित हो जाता है। उसके पैर आंखों की तरह हो जाते हैं, वे भी देखने लगते हैं। एक सेकेंड वह चूका कि वह गया। और क्या आपको पता है कि जिंदगी में भी आप ऐसी ही पतली कगार पर दिन भर खड़े हैं। चौबीस घंटे, एक सेकेंड चूकते हैं, और चले जाते हैं लेकिन जिंदगी भर सोए गुजार देते हैं। क्योंकि पता नहीं कि जिंदगी भी एक बिल्कुल पतली कगार है। और जिसके नीचे गिरने का हर क्षण मौका है। लेकिन हमे ख्याल नहीं है। और हम चले जा रहे हैं। हम बढ़े जा रहे हैं।
मैंने पीछे ही कहा था, इसी हॉल में पीछे बोल रहा था तो मैंने कहा कि अगर हम यहां एक पचास फिट का लंबा एक पटिया रख दें, एक फीट चौड़ा, और पचास फिट

लंबा। जमीन पर रख दें, और आपसे कहा जाए कि इस पर चलिए तो सब लोग चल जाएंगे।
किसी को कोई अड़चन नहीं... और न कोई गिरेगा? इतने लोगों में से न कोई बूढ़ा गिरेगा, न कोई स्त्री, न पुरुष, सब उस पर निकल जाएंगे। लेकिन उसी पटिए को ऊपर की गैलरी से और इसकी दीवाल से लगा कर रख दिया जाए। नीचे यह गड्ढा होगा। वही पटिया है, पचास फीट लंबा और एक फीट चौड़ा और आप से कहा जाए, इस पर चलिए। कितने लोग उस पर से जा पाएंगे? आखिर क्या, फर्क क्या हो गया? पटिया वही है, उतना ही लंबा है, उतना ही चौड़ा है, नीचे था आप चल गए, ऊपर था अब आप चलने में क्यों डर रहे हैं? असल में नीचे सोए हुए चलने में कोई खतरा नहीं है। आप सोए हुए चल सकते हैं। ऊपर सोए हुए नहीं चल सकते हैं। और नींद की ऐसी आदत है कि उसके विपरीत कोई भी काम करने में बड़ी कठिनाई, बहुत आर्डुअस हो जाता है। तो अगर उस पर आप चलेंगे तो एक-दो कदम ही चलेंगे। आपके प्राण थरथराएंगे कि आगे बढ़ूं या नहीं, खतरा है। खतरा क्या है? पटिया उतना ही बड़ा है, कोई फर्क नहीं पड़ रहा है। आप वही हैं, पटिया वही है, खतरा क्या है? खतरा न तो गड्ढे में हैं, न पटिए में है। खतरा आपके भीतर है, आप सोए हुए अब नहीं चल सकते हैं, अब जाग कर चलना होगा। और जाग कर चलने की हमें कोई आदत नहीं है। जीवन में होश की हमें कोई आदत नहीं है।
जीवन में हमें बेहोशी की आदत है। और बेहोशी को हम प्रेम भी करने लगते हैं, क्योंकि बेहोशी का एक सुख है, जागने का एक कष्ट है; बेहोशी का एक सुख है इसलिए सारी दुनिया में शराब पी जाती है, और नशे किए जाते हैं। बेहोशी का सुख यह है कि जीवन भूल जाता है। बेहोशी का सुख यह है कि जीवन भूल जाता है। हम जीवन को भूलने के सब तरह के उपाय करते हैं। नाटक देखते हैं, संगीत सुनते हैं, फिल्में देखते हैं, शराब पीते हैं; यह सब का सब भूलने का उपाय है। किसी भांति हम अपने जीवन को भूल जाएं सो जाएं, हमें नींद पूरी आ जाए, तो जीवन में कोई तकलीफ नहीं है। अधिकतम लोग सोना पसंद करते हैं, जागने की बजाय। अधिकतम लोग भूलना पसंद करते हैं, होश की बजाय; असल में अधिकतम लोग मरना पसंद करते हैं जीने की बजाय। अगर आप बहुत गहरे में देखेंगे, तो आपके सोने की जो प्रवृत्ति है कि सोए रहें, कोई तकलीफ न हो; कोई बेचैनी न हो, क्योंकि बेचैनी जगाती है, तकलीफ जगाती है, दुख जगाता है। इसलिए आप सुख को खोजते हैं, क्योंकि सुख में नींद हो सकती है। कम्फर्ट की जो खोज है, सुख की जो खोज है, वह नींद की खोज है। इसको समझ लेना चाहिए कि जितना आप सुख खोज रहे हैं, किसलिए खोज रहे हैं? क्योंकि सुख में ज्यादा जागने की जरूरत नहीं रहती। और यही वजह है कि जो लोग सामान्यतः सुख में रहते हैं, उनके भीतर कोई प्रज्ञा, कोई विवेक कभी नहीं जगता।
जीवन में प्रज्ञा और विवेक का जन्म दुख में होता है। सफरिंग में होता है। क्यों? क्योंकि सफरिंग में सोया नहीं रह सकते आप, जागना पड़ेगा। होश रखना पड़ेगा। पीड़ा जगाती है और आराम सुलाता है। हमारी सबकी खोज, आराम की खोज है। आराम की खोज अगर ठीक से समझें, तो जागने के विरोध में है। हम सोए होने के पक्ष में हैं। और जो आदमी सोए होने के पक्ष में है, अगर बहुत ठीक से सोचेगा, तो उसका लॉजिकल, उसका तार्किक अंत है कि वह आदमी मरने के पक्ष में है। क्योंकि मृत्यु तो बिल्कुल सो जाना है। जीवन को तो वही उपलब्ध होगा जो जागरण के पक्ष में हो। इसलिए जो मैंने पहले दिन कहा था कि हमारी मृत्यु की तरह है यह जिंदगी, यह इसीलिए मृत्यु की तरह है कि हम सोए हुए हैं। अगर आप जीवन को जानना चाहते हैं तो जागना होगा। और जागने के लिए कोई ऐसा नहीं है कि कभी मंदिर चले जाएं, आधा घड़ी को जाग जाएं, जागना होगा चौबीस घंटे, इसलिए तपश्चर्या अखंड है। खंडित नहीं है कि आपने दस-पांच मिनट कर ली, कि आपने समय पर कर ली और निपट गए। कोई जीवन, कोई जीवन में क्रांतियां ऐसे नहीं होती कि आप दस-पंद्रह मिनट एक कोने में बैठ गए मंदिर के जाकर और आप समझें, काम पूरा हुआ, लौट चलें।
जीवन अखंड है, तपश्चर्या अखंड है। प्रतिक्षण उसे साधना होगा। तपश्चर्या से कोई छुट्टी, कोई हॉलिडे नहीं होता। ऐसा नहीं होता कि दो घंटे तपश्चर्या कर ली, और फिर छुट्टी हो गई। चौबीस घंटे में तेइस घंटे तपश्चर्या कर ली, एक घंटा छुट्टी मना ली। तपश्चर्या से कोई छुट्टी नहीं है। कोई अवकाश नहीं है। चौबीस घंटे है, जागते है, धीरे-धीरे सोते हुए भी

है। धीरे-धीरे चौबीस घंटे चेतना पर काम करना है, और चेतना पर काम करना तब ही होता है, जब हम बोध को क्रमशः जगाएं। जितना हम जगाएंगे, उतना जागेगा। जितना हम जगाएंगे, उतना जागेगा, अनंत संभावनाएं हैं, बोध के जगने की। लेकिन हम जगाना नहीं चाहते और जहां जाग सकें, उन सारी स्थितियों से हम बचते हैं। हम हमेशा पुराने में ही बंधे रहना चाहते हैं, क्योंकि नये में बोध को जगाना होगा। हम हमेशा पुराने लोगों से ही घिरे रहना चाहते हैं, क्योंकि नये में बोध को जगाना होगा। हम हमेशा पुरानी स्थितियों को ही पकड़े रहते हैं, कोई नई स्थिति आएगी तो बोध को जगाना होगा। हम हमेशा पुरानी आदतों में जकड़े रहते हैं, क्योंकि आदतें छोड़ेंगे तो बोध को जगाना होगा। जिस आदमी को बोध को जगाना हो, उसे अपने चित्त को बहुत आदतों में बांधने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि आदतें मुर्दा हो जाती हैं और आदमी उन्हें सोए हुए करने लगता है।
आप रोज ठीक वक्त पर खाना खा लेते हैं और ठीक वक्त पर सो जाते हैं, ठीक वक्त पर उठ आते हैं। धीरे-धीरे यह सब मैकेनिकल हो जाता है। यह सब यांत्रिक हो जाता है। ठीक वक्त पर प्रार्थना कर लेते हैं, ठीक वक्त पर बच्चों को प्रेम कर लेते हैं, ठीक वक्त पर दफ्तर हो आते हैं; धीरे-धीरे आप एक मुर्दा आदमी हो जाते हैं। आदतों के पुंज हो जाते हैं। आपके भीतर सहज जागा हुआ कुछ भी नहीं रह जाता। और अगर जागा हुआ कुछ भी नहीं है, तो आप स्मरण रखें, आपको जीवन से कोई संबंध नहीं हो सकता। जागने के लिए कुछ करना होगा। सतत करना होगा। लोग मुझसे पूछते हैं क्या करें? वे मुझसे पूछना चाहते हैं, कोई छोटी-मोटी तरकीब हो, वह बता दी जाए, उनका चित्त शांत हो जाए। वह परमात्मा को पा लें। ऐसा नहीं है। ऐसा बिल्कुल नहीं है। कोई छोटी-मोटी तरकीब नहीं है।
कल ही मुझे किसी ने पूछा कि कोई शॉर्टकट होना चाहिए।
कोई शॉर्टकट नहीं है। कोई छोटा सा रास्ता होना चाहिए कि हम जल्दी से परमात्मा पर पहुंच जाएं। कोई ऐसा रास्ता नहीं है, और अगर कोई कहता हो कि ऐसा रास्ता है तो वह आपकी कमजोरी का, शोषण करने का रास्ता निकाल रहा है। आपकी कमजोरियों का शोषण हो रहा है, सारी दुनिया में। आप जल्दी से कोई रास्ता चाहते हैं। एक आदमी कहता है, यह ताबीज बांध लो, भगवान मिल जाएंगे। क्योंकि आप में कमजोरी है, वह ताबीज से आपका शोषण कर लेता है। आप कहते हैं हमें जल्दी भगवान चाहिए, वह कहता है कि चलो यज्ञ कर दो, मंदिर बनवा दो, धर्मशाला बनवा दो, सब ठीक हो जाएगा। वह कहता है, जाओ गंगा में नहा लो, सब ठीक हो जाएगा। वह आदमी आपका गुरु हो जाता है। क्योंकि उसने आपकी कमजोरी को पहचान लिया, उसके शोषण की तरकीब निकाल ली, आप मूर्ख बना दिए गए। कोई रास्ता नहीं है छोटा। छोटा रास्ता कैसे हो सकता है? परमात्मा को पाने का रास्ता एक ही है, न छोटा है, न बड़ा है। और वह है जीवन में अखंड बोध को स्मरण को, माइंडफुलनेस को, होश को, अमूर्च्छा को साधना--चौबीस घंटे। उठते-बैठते आपका कोई भी क्रम, कोई भी काम, कोई भी कर्म, कोई विचार की हलकी सी पर्त भी आपके अंजाने न हो। लेकिन आपका सब अनजाने हो रहा है।
अगर आप देखें, एक आदमी बैठा है कुर्सी पर अपने पैर को हिलाए जा रहा है। उससे पूछिए कि पैर क्यों हिला रहे हैं? तो एकदम पैर को रोक लेगा। जैसे ही आप पूछेंगे पैर को क्यों हिला रहे हैं? उसका बोध पैर की तरफ जाएगा, वह खुद ही समझेगा, यह क्या एब्सर्ड, फिजूल का काम कर रहा हूं मैं? पैर को हिला रहा हूं, वह एकदम से रोक लोगा। और वह कहेगा, मुझे कुछ पता नहीं, ऐसे ही कर रहा था, ऐसे ही हो रहा था। यह क्या पागलपन है कि ऐसे ही हो रहा था। आपका पैर है और आपके बिना जाने हिलता है और आप कहते हैं कि ऐसे ही हो रहा है। और जिस आदमी का पैर उसके बिना जाने हिल रहा है, उसके जीवन में बहुत कुछ बिना जाने होता होगा। स्वाभाविक है, उसके जीवन में बहुत कुछ बिना जाने होता होगा। अनजाने उसके जीवन में बहुत सी बातें होंगी। अगर आप अपने पिछले जीवन को स्मरण करें, तो मैं आपसे पूछूं, आपने क्रोध जानकर किया है? तो आपको पता चलेगा कभी जान कर नहीं किया। आपने जिन लोगों से मित्रता की, जान कर की है, या जिन लोगों से शत्रुता की है जान कर की है? जिन बातों को आप पसंद करते हैं, उनको जान कर पसंद करते हैं? और जिन बातों को नापसंद करते हैं उनको जान

कर नापसंद करते हैं? आप पाएंगे आपकी कोई पसंद, कोई नापसंद, कोई मित्रता, कोई शत्रुता कोई भी जान कर नहीं है। आप बिल्कुल वैसे ही हैं जैसे एक आदमी कुर्सी पर बैठ कर पैर हिला रहा है, ऐसे ही जिंदगी भर पैर हिलाते रहते हैं। और ये सारे काम आपके बिल्कुल अनजाने में हो रहे हैं। आप बिल्कुल सोए हुए किए चले जा रहे हैं। अगर कोई पकड़ कर जोर से पूछे, आप अपने एक भी काम का ठीक-ठीक अकाउंट नहीं दे सकते कि यह मैंने क्यों किया? एक भी काम का आप ठीक-ठीक ब्यौरा नहीं दे सकते कि यह मैंने... क्योंकि आपने जान कर ही नहीं किया। आपसे हुआ है, आपने किया नहीं है।
बुद्ध एक गांव के करीब से निकले थे और कुछ लोगों ने उन्हें गालियां दीं, अपमान किया तो बुद्ध ने कहा, मित्रों मैं जाऊं, मुझे दूसरे गांव जल्दी पहुंचना है। अगर तुम्हारी बातचीत पूरी हो गई हो तो मुझे जाने की आज्ञा दो। उन्होंने कहा बातचीत, हमने गालियां दी हैं और अपमान किया है, इसका उत्तर चाहिए। बुद्ध ने कहा कि जान कर गालियों का कभी कोई आदमी उत्तर नहीं दे सकता। अनजाने में उत्तर दे सकता है। और वह उत्तर दिया हुआ नहीं होता, उत्तर आता है। यानी उसमें वह आदमी सजग नहीं होता, यांत्रिक होता है। उधर से गाली आई, इधर धक्का लगा, दूसरी गाली यहां से निकल गई। वह आदमी बिल्कुल मशीन की तरह काम करता है। आपने बटन दबाई पंखा घूमने लगा। आपने बटन बंद की पंखा बंद हो गया। मैंने आपको गाली दी, आपके भीतर चित्त घूमने लगा, क्रोधित हो गया। आपने मुझे गाली दे दी। जो आदमी दूसरे के गाली देने से, बिना विचारे, बिना होश में भरे, गाली का उत्तर दे रहा है, वह आदमी मशीन है। वह अभी मनुष्य है ही नहीं। वह सोया हुआ आदमी है। आपसे सभी गालियां इसी तरह निकल रही हैं।
बुद्ध ने कहा कि पहले ऐसा होता था कि कोई मुझे गाली देता था, तो मेरे भीतर से भी गाली निकलती थी। अब तो मैं जाग गया हूं। अब तो मैं जाग गया हूं, इसलिए न तो तुम्हारी गाली बिना मेरे बोध के मेरे भीतर प्रवेश कर सकती है, सारे द्वारों पर मेरी चेतना बैठी हुई है। तुम्हारी गाली मेरे भीतर आती है तो मैं जानता हूं, गाली भीतर आ रही है और जैसे ही मैं जानता हूं गाली भीतर आ रही है, गाली एकदम समाप्त हो जाती है। धुआं हो जाती है। अनजाने गाली भीतर घुस जाए तो परेशान करती है, जान के घुसे तो परेशान करती ही नहीं। बुद्ध ने कहाः तुम्हारी गाली ऐसे है जैसे कोई अंगारे को पानी की तरफ फेंके, जब तक वह पानी से दूर होता है अंगारा होता है, पानी में गया राख हो जाता है। ऐसे ही मेरे भीतर जो बोध की शीतलता पैदा हुई है, तुम्हारी गाली जब तक मुझ तक नहीं आती तब तक गाली होती है, मुझे छूते से ही, मेरे बोध को छूते से ही ठंडी और राख हो जाती है। अब मैं किसका उत्तर दूं। और उत्तर कैसे दूं? जब तुम गाली देते हो तो मुझे तुम पर दया आती है कि कैसे पागल हो? क्रोध आता ही नहीं, क्योंकि मैं होश से भरा हुआ हूं। जब मैं बेहोश था तो मुझे क्रोध आता था, दया नहीं आती थी।
एक आदमी मेरे पास आए, उसे बहुत सी बीमारियां हों तो मुझे क्रोध आएगा
कि दया आएगी। एक आदमी मेरे पास आए, क्रोध में आए, वह भी मानसिक बीमारी है तो भी मुझे क्रोध आना चाहिए कि दया आनी चाहिए? एक आदमी मुझे गाली दे, तो मुझे क्रोध आना चाहिए कि दया आनी चाहिए? अगर मैं होश में हूं तो दया आएगी। और अगर मैं बेहोश हूं तो क्रोध आएगा। जो जीवन में सतत सारे कर्म जो हम कर रहे हैं, जो हमसे हो रहे हैं, कुछ भी हमसे ऐसा नहीं होना चाहिए।
एक गुरजिएफ हुआ। वह एक तिफलिस में, रूस के एक गांव में गया हुआ था। वहां कुछ उसके शत्रु थे। उन्होंने उसे बाजार में घेर लिया और उसका बहुत अपमान किया। बहुत अपमान किया, जैसा यह बुद्ध को गालियां दीं, ऐसी गालियां उसे दी। गुरजिएफ ने कहा कि मैं कल आकर इसका उत्तर दूंगा। तो उन लोगों ने कहा कि कल, कोई गालियों का उत्तर कल आकर देता है। अगर हिम्मत है तो अभी दो। उसने कहाः हिम्मत तो बहुत है, लेकिन बोध भी है। हिम्मत तो बहुत है, लेकिन बोध भी है। हो सकता है तुमने जो गालियां दीं, वे ठीक ही हों। तो जरा सोच लूं, समझ लूं, विवेक को जरा जगा लूं। अगर लगा तो उत्तर देने आऊंगा, अगर न आऊं उत्तर देने तो समझना कि... समझना कि तुमने जो कहा था, ठीक ही कहा था। गुरजिएफ ने लिखा है कि जब मेरा पिता मरने लगा, उसने मुझे अपने करीब

बुलाया। तब मेरी उम्र कोई ग्यारह वर्ष की थी और वह कोई एक सौ दस वर्ष का हो गया था, उसने मेरे कान में--मुझे पास बुलाआ और मुझसे कहा कि एक ही वचन मैं चाहता हूं तुझसे, एक ही आश्वासन चाहता हूं और वह आश्वासन यह कि तू कोई भी काम करे तो बिना बोध के मत करना। और गुरजिएफ ने लिखा कि उस एक आश्वासन ने मेरा सारा जीवन बदल दिया। जो भी काम करना है, बोध से करना है, होश से करना है। ध्यान पूरा वहां हो, ध्यान कहीं ओर हो और काम हुआ तो जीवन में भूल हो जाती है और आदमी गिरता है। ध्यान वहीं हो तो भूल असंभव है।
विनोबा नये-नये गांधी के पास पहुंचे थे। तो विनोबा सूत कातते हैं, शायद उनसे अच्छा सूत का और चरखे का जानकार कोई भी नहीं है। और गांधी तो कहते थे, वे आचार्य हैं। लेकिन विनोबा का चरखा भी उन्होंने बहुत अच्छा बना लिया था। पौनी भी बहुत अच्छी बना ली थी। कातते भी बहुत होशियारी से थे। लेकिन फिर भी धागा टूट-टूट जाता था। तो उन्होंने गांधी को पूछा कि मेरा चरखा आपसे बेहतर है, मेरी पोनी आपसे बेहतर है, सूत को निकालने का जहां तक संबंध है, मेरी जानकारी आपसे कम नहीं है। सूत मेरा आपसे बारीक, ज्यादा सधा हुआ और एक सा और समान है। लेकिन आपका सूत टूटता नहीं, मेरा सूत टूट क्यों जाता है? गांधी ने कहाः तुम्हारा ध्यान कहीं और चला जाता होगा। जब तुम सूत को कातते हो, तो सूत तो बारीक पतली और कच्ची चीज है, अगर ध्यान कहीं और चला गया तो हाथ धीमा सा झटका खा जाता है और सूत टूट जाता है। अगर ध्यान वहीं सूत पर ही रहे, सूत के साथ ही ऊपर आए और सूत के साथ ही नीचे जाए, और ध्यान की धारा सतत सूत के साथ ही ऊपर-नीचे होती रहे, तो सूत कैसे टूटेगा? इसलिए गांधी कहने लगे कि चरखा कातना ही प्रार्थना है। प्रार्थना हो गई अगर ध्यान है तो। अगर बुहारी घर में लगाई, और ध्यानपूर्वक लगाई कि बुहारी के साथ ही ध्यान आगे जाए, बुहारी के साथ ही ध्यान पीछे लौट आए, तो बुहारी लगाना ध्यान हो गया, प्रार्थना हो गई।
जीवन का हर काम प्रार्थना और परमात्मा के पहुंचने का मार्ग हो सकता है, अगर उसके साथ बोध संयुक्त हो। और जीवन का हर काम नरक जाने का मार्ग बन जाता है, अगर उसके साथ बोध संयुक्त न हो।
एक साधु था तिब्बत में। एक आदमी उसके पास आया और उसने कहा, और वह आदमी
जो था, तिब्बत में बड़ा प्रसिद्ध आदमी था, बहुत बड़ा सेनापति था। उसके दोनों तरफ तलवारें लटकी हुई थीं। वह एक साधु के पास आया और उसने उस साधु को कहा कि क्या आप मुझे बता सकते हैं कि स्वर्ग जाने का मार्ग क्या है? उस साधु ने कहा स्वर्ग? अपनी शक्ल तो देखो पहले। स्वर्ग जाने के लिए आ गए। वह था प्रसिद्ध सेनापति, सारे मुल्क में उसकी इज्जत और आदर थी। उसकी आवाज से लोग कंप जाते थे। और वह जब बूढ़ा भी हो गया था, नब्बे वर्ष भी पार कर गया था, तब भी जब युद्ध का सवाल उठता था तो उसे बुलाया जाता था। इतना उसका आदर था। इतना बूढ़ा हो गया था कि घोड़े पर नहीं बैठ सकता था और दो आदमी उसे उठा कर घोड़े पर बैठाते थे।
जब उसे एक दफा घोड़े पर बिठाया जा रहा था, दो आदमी उसे उठा कर बैठा रहे
थे तो एक नया-नया सैनिक आया था, वह हंसने लगा कि यह आदमी क्या सेनापति का काम करेगा, जिसको बिठाने के लिए दो आदमी घोड़े पर सहारा करते हैं। तो उस बूढ़े ने उसे बुलाया, इधर आओ। क्यों हंसे? उसने कहाः मैं इसलिए हंसा कि यह बूढ़ा क्या सेनापति का काम करेगा, जब इसे दो आदमी घोड़े पर बिठाते हैं। उसने कहाः माना कि मुझे बिठाने के लिए दो आदमियों की जरूरत है, लेकिन घोड़े से दो हजार आदमी भी नीचे नहीं उतार सकते। उसने कहा कि माना मुझे बिठाने के लिए दो आदमी की जरूरत है, लेकिन घोड़े से नीचे उतारने के लिए दो हजार आदमी भी काफी नहीं पड़ेंगे। ऐसा वह सेनापति था। तो वह उसे फकीर के पास गया, उस फकीर ने कहा अपनी शक्ल देखो। स्वर्ग जाने की बातें करने आ गए हैं। उसको गुस्सा आ गया, उसका हाथ मूठ पर चला गया। उसने कहा कि क्या खिलवाड़ कर रहा है कि मूठ, तलवार, तलवार क्या बिगाड़ेगी मेरा? उसकी तलवार बाहर आ गई। गुस्से में आ गया। और उस साधु ने कहा कि क्या बचकानी बात कर रहा है, यह तलवार क्या करेगी, धार भी है? उसकी तलवार उसकी गर्दन पर चली गई। उस फकीर ने कहाः देख नरक जाने का रास्ता आ गया। उस फकीर ने कहा कि देख, नरक जाने का रास्ता आ गया। जो उसने यह कहा कि देख नरक जाने का रास्ता आ गया। उसे एकदम से होश आया, तलवार उसने

वापस ली, म्याल में डाली, उसने कहा यही स्वर्ग जाने का रास्ता है। समझे ना आप।
वह आदमी बोध खो दिया, क्रोध से उत्तप्त हो गया, मूर्च्छा पकड़ गई, तलवार बाहर निकल आई, यह बिल्कुल मैकेनिकल एक्ट था। वह तो रोज का धंधा था, तलवार बाहर निकालने का, तलवार गर्दन पर चली गई। वह फकीर बोलाः देख नरक जाने का रास्ता आ गया। नरक का द्वार खोल लिया। जैसे उसने कहा, नरक का द्वार खोल लिया, वह समझा, अरे! उत्तर दिया गया है, जो मैंने पूछा था। होश वापस लौट आया, तलवार वापस म्यान में चली गई। उस फकीर ने कहा कि यही स्वर्ग जाने का रास्ता है। होश, जीवन में जो भी हो बोधपूर्वक हो। जीवन में कुछ भी अबोधपूर्वक और अज्ञानपूर्वक न हो तो क्या होगा? तो यह होगा कि चौबीस घंटे आपको अपने शरीर के भीतर एक ज्योतिशिखा, एक विवेक की ज्योति, अलग अनुभव होने लगेगी--क्रमशः। आप अनुभव करेंगे, मैं अलग हूं। शरीर आपको खोल की तरह मालूम होने लगेगा। जैसे हम इस भवन में बैठे हुए हैं तो मुझे ऐसा तो नहीं मालूम पड़ता कि मैं भवन हूं। मुझे मालूम पड़ता है कि मैं भवन में हूं। अगर बोध आपके भीतर जगेगा, तो आपको लगेगा मैं शरीर में हूं, यह बिल्कुल साफ दिखेगा, दीवालें शरीर की अलग और आप भीतर अलग मालूम होने लगेंगे।
जैसे कच्चा नारियल होता है न, तो उसकी अंदर की गिरी उसके खोल से जुड़ी
और चिपकी होती है और फिर पक्का नारियल होता है। उसकी गिरी और खोल अलग हो जाते हैं।
एक मुसलमान फकीर था, फरीद। उसको लोग नारियल चढ़ाते थे जाकर। तो किसी ने आकर पूछा कि जब क्राइस्ट को सूली पर लटकाया होगा तो उनको तकलीफ नहीं हुई। और जब मंसूर को लोगों ने काटा था तो उसे पीड़ा नहीं हुई होगी। शेख फरीद के पास नारियल पड़ा था। उसने एक नारियल उठा कर दिया। वह एक गीला नारियल था।
उसने कहा इसे फोड़ो। वह नारियल फोड़ा गया, नारियल के ऊपर की खोल तो टूटी ही टूटी, उसके भीतर की गिरी भी छिन्न-भिन्न हो गई।
शेख फरीद ने कहा कि देख एक तरह के आदमी इस तरह के होते हैं तो सूखे नारियल को उसने पटका। ऊपर की खोल टूट गई, भीतर की गिरी साबुत बाहर निकल आई। उसने कहा एक तरह के आदमी इस तरह के भी होते हैं। एक तरह के आदमी होते हैं, उनकोशरीर को चोट पहुंचाओ, उनकी आत्मा में भी चोट पहुंच जाती है, क्योंकि शरीर और आत्मा जुड़े रहते हैं। और एक तरह के आदमी होते हैं, उनके शरीर को कितनी ही चोट पहुंचाओ, उनकी भीतर आत्मा तक कोई चोट नहीं पहुंचती, क्योंकि शरीर और आत्मा का बोध पृथक हो जाता है। जितना आपके भीतर होश जगेगा, आपकी गिरी और खोल अलग-अलग होने लगेगी, आप सूखे नारियल होने की तरफ बढ़ना शुरू हो जाएंगे। आपका शरीर अलग और आपकी चेतना आपको पृथक मालूम होने लगेगी। बोध में ही यह हो सकता है, अबोध में यह कैसे होगा? अबोध में तो कोई चीज पृथक नहीं मालूम हो सकती।
जितना बोध गहरा होगा, आपकी आत्मा, आपकी चेतना शरीर से भिन्न, अलग खड़ी हुई मालूम होने लगेगी। और वह जोशरीर से अलग है, उसकी कोई मृत्यु नहीं है। उसे जानते ही अनंत जीवन के द्वार खुल जाते हैं। और वह जोशरीर से पृथक है, वह जोशरीर से भिन्न है, वह जोशरीर में है; लेकिन शरीर ही नहीं है। वह जोशरीर के वस्त्रों को पहने हुए है; लेकिन शरीर से अलग है; उसकी यात्रा बड़ी अलग है। शरीर का जन्म होता है, शरीर की मृत्यु होती है। उसका न कोई जन्म है, उसकी न कोई मृत्यु है, उस अनंत यात्री की तरफ जब आपका बोध धीरे-धीरे विकसित होकर प्रवेश पाता है, तो आपको कुछ नई बातों का अनुभव होता है। आपको अनुभव होता है कि आप एक दुनिया से मर गए और एक नई दुनिया में आपका जन्म हो गया। बोध के परिवर्तन से एक दुनिया गई और एक नई दुनिया का प्रारंभ हो गया। जो दुनिया थी, उसका नाम संसार था। जो दुनिया है, उसका नाम परमात्मा है। यह संसार ही परमात्मा हो जाता है। यह चारों तरफ फैला हुआ विस्तार ही ब्रह्म हो जाता है।
ब्रह्म और परमात्मा और संसार और जगत अलग-अलग बातें नहीं हैं, इसी सत्य को देखने के दोढंग हैं। अज्ञान में, अबोध में जो दिखाई पड़ता है, वह संसार है। बोध में, सचेतन में जो दिखाई पड़ता है, वही परमात्मा है।
परमात्मा और संसार दो नहीं है। हमारे भीतर अबोध हो, तो बाहर संसार है।

हमारे भीतर बोध हो तो सब परमात्मा है। और उस क्षण और उस घड़ी में आपके भीतर जो क्रांति और नया जन्म होता है, वह आपको अपने "मैं" से मुक्त कर देता है। आपका मैं-भाव चला जाता है और परमात्म-भाव प्रविष्ट हो जाता है। आपको तब ऐसा नहीं लगता कि मैं हूं, तब आपको लगता है, हूं। और "मैं" शून्य हो जाता है। होना मात्र शेष रह जाता है। आपको लगता है कि है, सत्ता है, लेकिन "मैं" वह "मैं" विलीन हो जाता है। वह "मैं" तोशरीर के साथ जुड़े होने की वजह से पैदा होता है। वह तोशरीर के साथ एक होने की भ्रांति थी कि लगता था कि मैं हूं, जैसे ही शरीर से अलग आपका संबंध हुआ, "मैं" गया। "मैं" की ही मृत्यु होती थी, जब "मैं" ही चला गया तो मृत्यु किसकी होगी? जो सत्य को जानता है, वह मरने के पहले मर जाता है। और इसलिए उसका मरना मुश्किल हो जाता है। लाओत्सु हुआ है। उसने कहा है कि धन्य हैं वे लोग, जो मरने के पहले मर जाते हैं। क्योंकि उनकी कोई मृत्यु नहीं होगी। बहुत अदभुत बात कही, धन्य हैं वे लोग, जो मरने के पहले मर जाते हैं, क्योंकि उनकी कोई मृत्यु नहीं होगी। वे ही जीवन को उपलब्ध होते हैं।
मैंने ये जो सारी बातें कही हैं, ये मरने के पहले मर जाने के लिए हैं। स्पष्ट आपके जीवन में एक मृत्यु हो जाए। मृत्यु उस तरफ से जिसको आप जीवन समझते थे तो उस तरफ आपका जीवन खुल जाएगा, जिसे आप नहीं जानते थे, जो अभी अंधकारपूर्ण था। और यह बोध के माध्यम से होता है। अखंड बोध के माध्यम से होता है। जरूर लगेगा कि मेरी बात कठिन है। असल में जीवन में कुछ भी नहीं हो सकता, जो कि मूल्यवान हो और कठिन न हो। लगेगा कि मेरी बात, मुझे लोग जगह-जगह पूछते हैं, सामान्य मनुष्य की हैसियत के बाहर है, यह बिल्कुल गलत है। यह किसी की हैसियत के बाहर नहीं है। और इस तरह के बहाने करके हम अपने ही हाथ से, अपनी हैसियत कम कर देते हैं। ये सब बहाने हैं। हम अपने को सामान्य बनाने की कोशिश में लगे रहते हैं कि हम बहुत सामान्य आदमी हैं, हमसे क्या होगा? आपसे ज्यादा विशेष न महावीर थे, न बुद्ध थे, न कोई कभी हुआ है।
हर मनुष्य की उतनी ही गरिमा है, जितनी किसी और की हो। लेकिन हम बहुत होशियार लोग हैं, हमने महावीर को बना दिया भगवान, जिससे कि हम सामान्य हो सकें। बुद्ध को बना दिया अवतार ताकि हम सामान्य हो सकें। क्राइस्ट को बना दिया ईश्वर-पुत्र ताकि हम सामान्य हो सकें। हमने इन सारे लोगों को अलग कर दिया अपने से ताकि हम सामान्य हो सकें और सो सकें। और हम कह सकें कि जागना तो कुछ विशिष्ट लोगों की बात है। हम तो सामान्य लोग हैं, हम कैसे जाग सकते हैं?
कोई मनुष्य सामान्य नहीं है। लेकिन इसका पता आपको तब तक नहीं चलेगा,
तब तक कि बोध जगना शुरू न हो जाए। जब तक बोध नहीं जगा है, तब तक हर एक सामान्य है। और जब बोध जगने लगे तो कोई सामान्य नहीं है। जब तक बीज में अंकुर न फूटे तब तक ऐसा लगता है कि पता नहीं, इस बीज में वृक्ष है भी या नहीं। लेकिन ऐसा कोई भी बीज नहीं है, जिसमें वृक्ष न हो। लेकिन उसका प्रमाण कब मिलता है? प्रमाण तो तब ही मिलता है, जब अंकुर फूटे। तो अभी से अपने को सामान्य न समझ लें कि मैं सामान्य हूं। अभी आप कुछ नहीं तय कर सकते। थोड़ा प्रयास करें, थोड़ी हिम्मत करें, थोड़ा साहस करें, थोड़ा अंकुर फूटने दें और आपको पता चलेगा, कोई बीज ऐसा नहीं जिसमें वृक्ष न हो। और कोई मनुष्य ऐसा नहीं जिसके भीतर परमात्मा की संभावना नहीं है। वह संभावना है। लेकिन उसे जगाना होगा। उसे उठाना होगा। और साहस करना होगा उस जीवन के प्रति जिन्हें हम सच समझे हुए हैं, उन बातों के प्रति जिन्हें हम बड़ी कीमत की समझे हुए हैं, मरना होगा। और अगर कोई उन बातों के प्रति मरे, और भीतर की तरफ जागे और अगर ये दोनों क्रियाएं साथ चलें कि वह व्यर्थ की बातों के प्रति मरता जाए और सार्थक बोध के प्रति जागता चला जाए, तो क्रांति बिल्कुल सुनिश्चित है, और उस क्रांति से ही मनुष्य उस स्वतंत्रता को, उस मुक्ति को अनुभव करता है।
एक छोटी सी कहानी और अपनी चर्चा को मैं पूरा करूं।
बहुत पुराने समय में कभी कोई राजा हुआ। वह जंगल से एक तोते को पकड़ लाया। तोता बड़ा सुंदर था। बहुत सुंदर था। उसे उस राजा को उस तोते से बहुत प्रेम भी हो गया। उसने उसके लिए स्वर्ण के पिंजरे बनवाए। उनमें हीरे-मोती

जड़वाए, लाखों रुपये उन पर खर्च किए, और उस तोते को पाला। उसे बड़ी शिक्षा दी। वह मनुष्य की भाषा सीख गया और बोलने लगा। वर्ष बीत जाने पर एक दिन उस राजा ने कहा कि मैं वन जा रहा हूं, शिकार के लिए जिस वृक्ष से तुम्हें पकड़ा था। तुम्हारे बंधुजन, तुम्हारे स्वजातीय, तुम्हारे मित्र वहां रहते होंगे, कोई संदेश तुम्हारा हो तो मैं पहुंचा दूं? उस तोते ने कहाः उनको कह देना कि मैं बहुत आनंद में हूं, क्योंकि राजा का मुझ पर बड़ा प्रेम है। मैं बहुत सुख में हूं, क्योंकि राजा की मुझ पर बड़ी कृपा है। लेकिन न तो सुख से स्वतंत्रता बेची जा सकती है, और न राजा के प्रेम और कृपा से। तो तुम सचेत रहना। उसने कहा कि मेरे मित्रों को कह देना कि मैं सुख में हूं, राजा की बड़ी कृपा है। सब तरह से व्यवस्था है, सुविधा है, राजा का बड़ा प्रेम है। लेकिन किसी भी कीमत पर स्वतंत्रता नहीं बेची जा सकती है। तुम सजग रहना, यह मेरे मित्रों को तुम कह देना।
राजा ने कहाः इसने संदेश तो बहुत गड़बड़ दिया है, लेकिन वचन दिया था, तो
वह गया और उसने जाकर उस वृक्ष के नीचे जहां से तोते को पकड़ा था, वहां बहुत हजारों तोते थे, उस झाड़ पर रहते थे--सांझ को वे सब लौटे, तो राजा ने उनसे कहा कि तुम्हारे बंधु ने यह--यह खबर भेजी है। जैसे उसने कहा, एक-एक तोता वृक्ष से नीचे गिरने लगा, जैसे अचानक मृत्यु हो गई। जैसे उसने कहा कि उसने कहा है सुख तो बहुत है, लेकिन स्वतंत्रता सुख पर नहीं बेची जा सकती।
पिंजड़ा तो बहुत सुंदर है, सोने का है, लेकिन आकाश के मुकाबले तो उसे नहीं चुना जा सकता, तुम जरा सावधान रहना। यह जैसे ही राजा ने कहा कि एक-एक तोता वृक्ष से नीचे गिरने लगा। जैसे कि सारे तोते एकदम मरने लगे। उसने कहा कि यह क्या? यह कैसा अपशगुन वाला संदेश इसने भेजा है, हजारों तोते नीचे गिर गए और उनकी मृत्यु हो गई और उनके ढेर लग गए। राजा बहुत घबड़ा गया। वह लौटा, वह बहुत चिंतित हुआ कि यह कैसा संदेश था, उसके कैसे शब्द थे कि हजारों तोते एकदम मर गए? गिर गए नीचे और ढेर लग गए। वह वापस लौटा। और उसने जाकर उस तोते को कहा कि तून यह क्या पागलपन किया? यह कैसा संदेश भेजा? यह कैसे अपशगुन भरे शब्द थे? कि मैंने जैसे ही कहा हजारों-लाखों तोते गिरने लगे वृक्ष से और मर गए। जैसे ही राजा ने यह कहा देखा कि तोता तड़फड़ाया और मर गया। वह वहीं मर गया उस पिंजरे के भीतर, वह राजा बोला मैं भी कैसा पागल हूं, मैंने यह खबर आकर इसको फिर सुना दी, यह भी मर गया। यह मामला क्या है? लेकिन तोता मर गया, उसे बहुत प्यारा था। उसने सोचा कि उसका शाही सम्मान से विदा हो। बहुत बड़ा सम्मान की व्यवस्था की गई। पिंजरा खोला गया, उसे बहुत अच्छे वस्त्रों में रखा गया, लेकिन लोग देख कर हैरान हुए जैसे ही उसे पिंजरे के बाहर रखा, वस्त्रों में रखा, उसने पंख फड़फड़ाए और वह आकाश में उड़ गया। उसने ऊपर महल की चोटी पर बैठ गया। राजा ने कहाः यह क्या धोखा है? यह क्या मामला है? उस तोते ने कहाः मेरे मित्रों ने मुक्त होने का संदेश मुझे भेजा। उन्होंने मेरे संदेश का उत्तर दिया। उन्होंने कहाः मुर्दे की भांति हो जाओ, पिंजरा खुल जाएगा।
और यही संदेश है। और आज अंतिम विदा में यही आपको कहना चाहता हूं, मुर्दे की भांति हो जाएं तो जीवन मिल जाएगा। और कुछ अंत में मुझे नहीं कहना है। इतने दिन तक प्रेम से मेरी बातों को सुना है। बहुत सी ऐसी बातों को जिनसे बेचैनी और परेशानी हो सकती है, जिनसे मुझ पर क्रोध आ सकता है, मेरी निंदा का, मेरा खंडन करने का मन हो सकता है; ऐसी बातों को भी प्रेम से सुना है। ऐसी बातों को जिनसे आपके मन को बहुत चोट पहुंच सकती है, बहुत दुख हो सकता है; आपकी बंधी हुई धारणाओं को बहुत हानि पहुंच सकती है, क्षति हो सकती है, उनको भी प्रेम से सुना है। मुझे आप पत्थर भी मारें उन बातों को सुन कर तो मुझे लगेगा कि कृपा करते हैं, केवल पत्थर ही मारते हैं, लेकिन न कोई पत्थर मारता है, न कुछ। प्रेम से सुनते हैं तो मुझे बड़ा अनुग्रह मालूम होता है। ऋणि मैं आपका हो जाता हूं, आप मेरे ऋणी होने के कोई कारण नहीं हैं। मैं ऋणी हो जाता हूं, इतनी चोट पहुंचाता हूं प्रेम से सुन लेते हैं, तो मुझे बड़ा अनुग्रह मालूम होता है। मालूम होता है ईश्वर की अनुकंपा है कि आपका इतना प्रेम है कि मैं जो भी कह रहा हूं, उसे सुन लेते हैं।

इन सारी बातों को सुना उससे बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में इतना ही कहता हूं कि अगर सच में जीवन को पाना हो तो मरना सीख लेना होगा। और जो मर जाता है, उसका पिंजरा खुल जाता है और उसे जीवन और स्वतंत्रता और आकाश की मुक्ति उपलब्ध हो जाती है। ईश्वर करे ऐसी मुक्ति प्रत्येक को उपलब्ध हो। वह प्रत्येक के भीतर है। प्रत्येक का अधिकार है, प्रत्येक की क्षमता है। अगर हमने प्रयास किया, अगर हमने चेष्टा की, अगर हम सजग हुए तो उसे पाया जा सकता है। परमात्मा यह मौका सबको दे, यह कामना करता हूं और पुनः सबका धन्यवाद करता हूं। अंत में सबके भीतर परमात्मा के लिए मेरे प्रणाम स्वीकार करें।